गुप्त साधन तन्त्रम्

प्रदीप कुमार राय

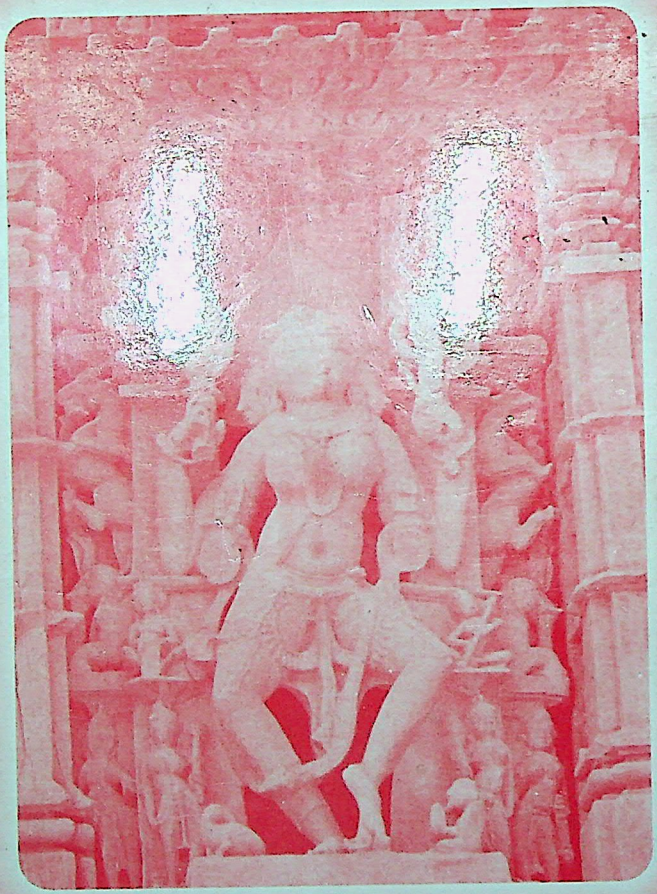

प्राच्य प्रकाशन, वाराणसी

तन्त्र ग्रन्थमाला नं0 25

गुप्तसाधनतन्त्र

(मूल एवं हिन्दी अनुवाद सहित)

सम्पादक एवं अनुवादक

प्रदीप कुमार राय

प्राच्य प्रकाशन

वाराणसी-221002

संस्करण-2010

प्रकाशक :

कुश राय

प्राच्य प्रकाशन

C 21/3-C (होटल हिन्दुस्तान इण्टरनेशनल कम्पाउण्ड)
मलदहिया, वाराणसी-221002 (भारत)

© प्रेमचन्द महताब राय शोध संस्थान
लमही, (पोस्ट-वाया सारनाथ)
वाराणसी-221007 (भारत)

मूल्य : 100.00 रुपये

मुद्रक :
गौतम प्रिण्टर्स, जगतगंज, वाराणसी-2

विषयानुक्रमणिका

प्रथमः पटलः	कुलाचार-माहात्म्य	1-3
द्वितीयः पटलः	तपस्या एवं तीर्थसेवा का फल	4-8
तृतीयः पटलः	पञ्चाङ्गोपासना	9-11
चतुर्थः पटलः	साधनोपाय	12-14
पञ्चमः पटलः	पुरस्क्रिया	15-18
षष्ठः पटलः	दक्षिणकालिका की आराधना-विधि	19-27
सप्तमः पटलः	परमतत्त्व	28-31
अष्टमः पटलः	सिद्धारिचक्र	32-35
नवमः पटलः	धनदा देवी के मन्त्र, पूजादि	36-46
दशमः पटलः	मातङ्गीदेवी के मन्त्रादि	47-54
एकादशः पटलः	माला-वर्णन	55-59
द्वादशः पटलः	परमाक्षरी गायत्री	60-62

पूज्यपाद

माता जी

के

श्रीचरणों

में

सादर समर्पित

गुप्तसाधनतन्त्र

प्रथमः पटलः

कैलासशिाखरे रम्ये नानारत्नोपशोभिते।
तं कदाचित् सुखासीनं भगवन्तं त्रिलोचनम्।
पप्रच्छ परया भक्त्या देवी लोकहिते रता ॥1॥

श्रीदेव्युवाच —

देवदेव महादेव लोकानुग्रह कारक।
कुलाचारस्य माहात्म्यं पुरैव सूचितं त्वया ॥2॥
तत् कथं गोपितं देव मम प्राणेश्वर प्रभो।
कथयस्व महाभाग यद्यहं तव वल्लभा ॥3॥

एकदा भगवान् त्रिलोचन नानारत्नोपशोभित मनोहर कैलासगिरि-शिखर पर सुख से उपविष्ट थे, उसी समय देवी पार्वती ने लोक के हित-साधन करने के मानस से परम भक्तिपूर्वक महेश्वर से जिज्ञासा की ।।1।।

देवी ने कहा — हे देवदेव ! आप देवतागणों में श्रेष्ठ हैं एवं सर्वदा समस्त लोकों के प्रति सातिशय अनुग्रह को प्रकट करते हैं। हे नाथ ! आप ने पहले कुलाचार के माहात्म्य का प्रकाशन किया है ।।2।।

हे प्राणेश्वर ! इस समय उस कुलाचार के माहात्म्य को क्यों गोपित कर दिया है ? उसे मेरे निकट बतावें। हे महाभाग ! यदि आप मुझे प्राणवल्लभा-रूप में जानते हैं, तब इस समय मेरे निकट उस गोपित कुलाचारमाहात्म्य को प्रकाशित कीजिए ।।3।।

श्रीशिव उवाच —

शृणु देवि प्रवक्ष्यामि सारात्सारं परात्परम् ।
तव स्नेहान्महादेवि दासोऽस्मि तव सुन्दरि ।
तत्कथां कथयिष्यामि सावधानावधारय ॥4॥
कुलाचारं महाज्ञानं गोप्तव्यं पशु सङ्कटे ।
प्रगोप्तव्यं महादेवि स्वयोनिरिव पार्वति ॥5॥
वेदागमपुराणानि वेदशास्त्राणि पार्वति ।
एतन्मध्ये सारभूतं कुलाचारं सुदुर्लभम् ॥6॥
वक्त्रकोटिसहस्रेस्तु जिह्वाकोटिशतैरपि ।
कुलाचारस्य माहात्म्यं वर्णितुं नैव शक्यते ॥7॥
किञ्चिन्मया तु चापल्यात् कथयामि शृणुष्व मे ।
शक्तिमूलं जगत् सर्वं शक्तिमूलं परन्तपः ॥8॥

शिव ने कहा — हे देवि ! मैं आपके निकट सारतर परम तत्त्वभूत गोपनीय बात को बता रहा हूँ, इसे श्रवण करें । मैं आपका चिरदास हूँ । हे सुन्दरि ! आपके प्रति मेरी अचला श्रद्धा है, मैं उस श्रद्धा के वशवर्ती होकर गोपित कुलाचार-माहात्म्य का वर्णन करूँगा । इस कुलाचारीय बात को गोपित रखना चाहिए । अतः इस कथन को अत्यन्त सावधानी के साथ श्रवण करें ।।4।।

हे पार्वति ! यह कुलाचार महाज्ञान का साधन है । जो उस कुलाचार के अनुसार साधन करते हैं, वह तत्त्वज्ञान का लाभ कर सकते हैं । इस महाज्ञानप्रद कुलाचार को सर्वदा पश्वाचारी के निकट से स्वीय योनि के समान गोपन करें ।।5।।

हे पार्वति ! वेद, आगम, पुराण, वेदान्तादि – ये सभी सारभूतशास्त्र हैं एवं इन सभी में भी कुलाचार सारतम है । अतः यह परम दुर्लभ है ।।6।।

सहस्रकोटि वदन एवं शतकोटि जिह्वाओं के द्वारा भी कोई इस कुलाचार के माहात्म्य का वर्णन नहीं कर सकता है ।।7।।

हे देवि ! आपके निकट कुलाचार के माहात्म्य का वर्णन करना मेरी चपलता मात्र है । फिर भी आपके निकट यथाशक्ति किञ्चिन्मात्र इसका कीर्त्तन कर रहा हूँ, श्रवण करें । शक्ति ही अनन्त जगत् का आदिकारण है एवं शक्ति ही समस्त तपस्याओं का मूल है ।।8।।

शक्तिमाश्रित्य निवसेद् यत्र कुत्राश्रमे वसन् ।
साधकस्यार्चितां शक्तिं साधकज्ञान कारिणीम् ।।9।।
इहलोके सुखं भुक्त्वा देवीदेहे प्रलीयते ।
साधकेन्द्रो महासिद्धिं लब्ध्वा याति हरेः पद्म ।।10।।
पञ्चाचारेण देवेशि कुलशक्तिं प्रपूजयेत् ।
नटी कापालिकी वेश्या रजकी नापिताङ्गना ।।11।।
ब्राह्मणी शूद्रकन्या च तथा गोपालकन्यका ।
मालाकारस्य कन्या च नवकन्याः प्रकीर्त्तिताः ।।12।।
विशेषवैदग्ध्ययुताः सर्वा एव कुलाङ्गना ।
रूपयौवनसम्पन्ना शीलसौभाग्यशालिनी ।।13।।
पूजनीया प्रयत्नेन ततः सिद्धिर्भवेद् ध्रुवम् ।
सत्यं सत्यं महादेवि सत्यं सत्यं न संशयः ।।14।।

इति गुप्तसाधनतन्त्रे पार्वतीशिवसंवादेप्रथमः पटलः ।।1।।

साधकगण शक्ति का आश्रय कर जिस किसी भी आश्रम में निवास क्यों न करें, उसी में रहकर वे सिद्धि लाभ कर सकता है । साधकगण शक्ति की अर्चना करने पर ही, वह शक्ति साधक को ज्ञान प्रदान करती है ।।9।।

जो साधक शक्ति की आराधना करते हैं, वह इस लोक में विविध प्रकार के सुखों का भोग कर, देवी के देह में प्रलीन हो सकते हैं एवं वह साधकेन्द्र शक्ति-साधन के बल से महासिद्धि का लाभ कर, अन्त में हरि-पद को प्राप्त करते हैं ।।10।।

हे देवेशि ! पञ्चाचार-क्रम से कुलशक्ति की अर्चना करें । नटी,कापालिक-कन्या, वेश्या, रजकी, नाऊ-पत्नी, ब्राह्मणी, शूद्रकन्या, गोपकन्या एवं मालाकार-कन्या – ये ही 'नवकन्या' के नाम से जानी जाती हैं ।।11-12।।

विशेषतः वे, जो विशेष-रूप से गुणशालिनी हैं, ऐसी सर्वजातीय रूप यौवन सम्पन्ना, सुशीला एवं सौभाग्यशालिनी कन्या का भी 'कुलाङ्गना' के रूप में ग्रहण किया जा सकता है ।।13।।

उक्त कुलाङ्गनाओं की पूजा यत्नपूर्वक करें । इस प्रकार अर्चना के द्वारा साधक को निश्चित ही सिद्धिलाभ होता है । हे महादेवि ! मेरे इस वाक्य को सत्य, सत्य जानें । इसमें संशय-मात्र न करें ।।14।।

गुप्तसाधनतन्त्र में प्रथम पटल समाप्त ।।1।।

द्वितीयः पटलः

श्रीपार्वत्युवाच —

बाधते मां कृपानाथ मुहू प्रष्टुं यदुत्सहे ।
स्त्रियः स्वभावचपला न शङ्केऽहं पुनः पुनः ॥1॥
यदुक्तं कृपया नाथ रहस्यं परमाद्भुतम् ।
गुरुर्ब्रह्मा गुरुर्विष्णुर्गुरुर्देवो गुरुर्गतिः ॥2॥
गुरुस्त्रीर्थं गुरुर्यज्ञो गुरुर्दानं गुरुस्तपः ।
गुरुरग्निर्गुरुः सूर्यः सर्वं गुरुमयं जगत् ॥3॥
किमनेन किं तपसा किमन्यतीर्थसेवया ।
श्रीगुरोरर्चितौ येन पादौ तेनार्चितं जगत् ॥4॥
ब्रह्माण्डभाण्डमध्ये तु यानि तीर्थानि सन्ति वै ।
गुरोः पादोदके तानि निवसन्ति हि सन्ततम् ॥5॥

पार्वती ने कहा — हे कृपामय ! आपके निकट जो बारम्बार प्रश्न करने की मेरी अभिलाषा हो रही है, इससे मुझे लज्जा आती है,तथापि स्त्रीजाति का स्वभाव अति चपला होने के कारण ही मैं पुनः-पुनः जिज्ञासा प्रकट कर रही हूँ एवं इसमें मुझे आशङ्का भी नहीं हो रही है ।।1।।

हे नाथ ! आपने मेरे प्रति कृपा करके ही इससे पूर्व परमाश्चर्य अद्भुत रहस्य को प्रकाशित किया है । उस समय आपने उपदेश दिया है कि – गुरु ही ब्रह्मा हैं, गुरु ही विष्णु है, गुरु ही सर्वदेवता हैं, गुरु ही सभी के आश्रय हैं, गुरु ही तीर्थ हैं, गुरु ही यज्ञ हैं, गुरु ही दान हैं, गुरु ही तपस्या है, गुरु ही अग्नि हैं, गुरु ही सूर्य हैं एवं गुरु ही सर्वजगत्स्वरूप हैं ।।2-3।।

यदि गुरु ही सर्वमय हैं तो इस तपस्या एवं अन्यान्य तीर्थ सेवाओं के द्वारा समधिक फलों की कैसी प्रत्याशा की जा सकती है ? आपके उपदेश से यह जाना जाता है कि जो गुरुदेव के पादद्वय की अर्चना करते हैं, वे जगत् की अर्चना-जनित फलों को प्राप्त करते हैं ।।4।।

और अनन्त ब्रह्माण्ड में जो सभी 'तीर्थ' विद्यमान हैं, गुरुदेव के पादोदक में भी वे सभी 'तीर्थ' निवास करते हैं ।।5।।

गुरोः पादोदकं येन शिरसा पुण्यभाग् भवेत् ।
सर्वतीर्थजलं पुण्यं लभते नात्र संशयः ॥6॥
इति तस्य गुरोर्ध्यानं तत्त्वतः श्रोतुमुत्सहे ।
लब्ध-त्वदर्द्धदेहां मां कथं वञ्चयसि प्रभो ।
मयि स्नेहानुबन्धेऽस्ति यदि तन्मे प्रकाशय ॥7॥

श्रीशङ्कर उवाच —

न वञ्चयामि देवि त्वां प्राणेभ्योऽपि गरीयसीम् ।
स्त्रीणां स्वभावचापल्याद् गोपितं न प्रकाशितम् ॥8॥
कथयामि तव स्नेहाच्छ्रीगुरोर्ध्यानमुत्तमम् ।
प्रकाश्यञ्च कुलीनेषु न प्रकाश्यं पशौ क्वचित् ॥9॥
कुलः शक्तिः समाख्याता अकुलः शिव उच्यते ।
तस्यां लीनो भवेद् यस्तु स कुलीनं प्रकीर्त्तितः ॥10॥

जो गुरुदेव के पादोदक को मस्तक पर धारण करते हैं, वे सर्वप्रकार के पुण्य का भाजन बनते हैं एवं सर्वतीर्थ अवगाहन के पुण्य का लाभ कर सकते हैं, इसमें कोई संशय नहीं है ।।6।।

हे प्रभु ! आपने इस प्रकार गुरु-माहात्म्य का कीर्त्तन मेरे निकट किया है, इस समय उन गुरुदेव के ध्यान का श्रवण करने के लिए मुझे सातिशय कौतूहल हो रहा है । हे नाथ ! मैंने आपके देह का अर्द्धभाग प्राप्त किया है, मुझे आप क्यों वञ्चना कर रहे हैं ? हे प्रभो ! यदि मेरे प्रति आपको स्नेह एवं अनुराग है, तो गुरु के स्वरूप का प्रकाशन मेरे निकट करें ।।7।।

शङ्कर ने कहा — हे देवि ! आप मेरे प्राण से भी गुरुतरा हैं, आपकी वञ्चना मैं नहीं कर रहा हूँ । केवल स्त्रीजनों का स्वभाव चञ्चल होने के कारण ही अब तक इसे प्रकाशित नहीं किया ।।8।।

हे देवि ! आपके स्नेह के वशीभूत होकर श्रीगुरु के ध्यान को बता रहा हूँ जो कुलाचार-तत्पर हैं, उन्हीं के निकट इस ध्यान को प्रकाशित करें, कदापि पश्वाचारी के निकट व्यक्त न करें ।।9।।

'शक्ति' ही 'कुल' के नाम से कहा जाता है एवं शिव को 'अकुल' कहा जाता है जो उस शक्ति में लीन हैं, उन्हें ही 'कुलीन' शब्द से निर्देशित किया गया है ।।10।।

कुलवृक्षान्नमस्कृत्य गुरुं ध्यायेत् पराम्बुजे ।
शरच्चन्द्रसमाभासं शरत्पङ्कज लोचनम् ॥1 1॥

ईषद्धास्यं शारदीयपूर्णेन्दुसदृशाननम् ।
दिव्यस्त्रगम्बरधरं दिव्यगन्धानुलेपनम् ॥1 2॥

सुरक्तशक्ति संयुक्तवामभाग मनोहरम् ।
वराभयकराम्भोजं सर्वलक्षणलक्षितम् ।
सहस्त्रारे महापद्मे गुरुं शिरसि चिन्तयेत् ॥1 3॥

एतत्ते कथितं देवि श्रीगुरोर्ध्यानमुत्तमम् ।
गोपनीयं प्रयत्नेन न प्रकाश्यं कदाचन ॥1 4॥

इति ते कथितं सर्वं तव स्नेहेन सुन्दरि ।
किमन्यत् संप्रवक्ष्यामि कथयस्व शुचिस्मिते ॥1 5॥

समस्त कुलवृक्षों को नमस्कार कर सहस्रदल कमल में गुरु का ध्यान करें । गुरुदेव की देहकान्ति शरत्कालीन पूर्णचन्द्र के समान समुज्वल है, इनके नयनयुगल शारदीय पङ्कज के समान आयत हैं । सर्वदा गुरुदेव के वदन पर मन्द-मन्द हास्य विलग्न है, गुरु का वदन शारदीय पूर्ण शशधर के समान शोभमान है । गुरुदेव दिव्य माल्य एवं दिव्यवसनधारी हैं । इनका सर्वाङ्ग सुगन्धपूर्ण दिव्य अनुलेपन से अनुलिप्त है । गुरुदेव के वामभाग में रक्तवर्णा शक्ति समासीना हैं, करपङ्कजद्वय में वर एवं अभयमुद्रा सम्बद्ध हैं । ये सर्वप्रकार के शोभन लक्षणों से लक्षित हैं । शिरःस्थित सहस्रदल-कमल में उक्त लक्षणान्वित गुरुदेव का चिन्तन करें ।।11-13।।

हे देवि ! इस प्रकार श्रीगुरु के उत्तम ध्यान का कीर्त्तन आपके निकट मैंने किया है । आप सर्वदा यत्नपूर्वक इसे गोपन रखें, कदापि प्रकाशित न करें ।।14।।

हे सुन्दरि ! आपके प्रति स्नेह-वश, इस प्रकार श्रीगुरु के स्वरूप का प्रकाशन किया हूँ और क्या कहें ? इसे प्रकट करें ।।5।।

श्रीपार्वत्युवाच –

गुरोर्ध्यानं श्रुतं नाथ सर्वतन्त्रेषु गोपतम् ।
स्त्रिया दीक्षा शुभा प्रोक्ता सर्वकाम फलप्रदा ।।16।।
बहुजन्मार्जितात् पुण्याद्बहुभाग्यवशाद् यदि ।
स्त्रीगुरुर्लभ्यते नाथ तस्य ध्यानन्तु कीदृशम् ।।17।।
कुलीनस्त्रीगुरोर्ध्यानं श्रोतुमिच्छामि साम्प्रतम् ।
कथयस्व महाभाग यद्यहं तव वल्लभा ।।18।।

श्रीशङ्कर उवाच –

शृणु पार्वति वक्ष्यामि तव स्नेहपरिप्लुतः ।
रहस्यं स्त्रीगुरोर्ध्यानं यत्र ध्येया च सा गुरुः ।।19।।
सहस्रारे महापद्मे किञ्जल्कगण शोभिते ।
प्रफुल्लपद्मपत्राक्षीं धनपीनपयोधराम् ।।20।।

पार्वती ने कहा – नाथ ! सर्वतन्त्रों में गोपित श्रीगुरु के ध्यान का मैंने श्रवण किया है । सम्प्रति स्त्री-गुरु के ध्यान का श्रवण करने की अभिलाषा करती हूँ । तन्त्र में कथित है कि स्त्री-गुरु के निकट दीक्षित होने पर, वह दीक्षा शुभप्रद होती है एवं सर्वप्रकार काम्यफलों को प्रदान करती है ।।16।।

बहुजन्मार्जित पुण्यबल से एवं बहुत भाग्यवश यदि स्त्री गुरु का लाभ किया जाय तो किस प्रकार उनका ध्यान करना है ? ।।7।।

हे महाभाग ! सम्प्रति मैं कुलीना स्त्रीगुरु के ध्यान का श्रवण करने की इच्छा करती हूँ । यदि मेरे प्रति आपको अनुराग है, तो उस ध्यान का वर्णन करें ।।18।।

शङ्कर ने कहा – हे पार्वति ! मैं आपके स्नेह के वशीभूत होकर, अतिगोपनीय स्त्रीगुरु के ध्यान को बता रहा हूँ, इस ध्यान के अनुसार ही साधकगण स्त्रीगुरु के स्वरूप का चिन्तन करें ।।19।।

केशरों से परिशोभित सहस्रारस्थित महापद्म पर शक्तिरूपिणी स्त्रीगुरु का चिन्तन करें । इनके नयनयुगल प्रफुल्ल पद्मपत्र के समान आयत हैं, स्थूल पयोधर-युगल परस्पर संश्लिष्ट-रूप से शोभित हो रहे हैं ।।20।।

सहस्रवदनां नित्यां क्षीणमध्यां शिवां गुरुम् ।
पद्मरागसमाभासां रक्तवस्त्रसुशोभनाम् ॥21॥
रत्नकङ्कणपाणिञ्च रत्ननूपुरशोभिताम् ।
शरदिन्दुप्रतीकाशवक्त्रोद्भासित कुण्डलाम् ।
स्वनाथ वामभागस्थां वराभय कराम्बुजाम् ॥22॥
इति ते कथितं देवि स्त्रीगुरोर्ध्यानमुत्तमम् ।
गोपनीयं प्रयत्नेन न प्रकाश्यं कदाचन ॥23॥

इति गुप्तसाधनतन्त्रे पार्वतीशिवसंवादे
द्वितीयः पटलः ॥2॥

ये सहस्रवदना एवं नित्या हैं अर्थात् इनकी उत्पत्ति या प्रलय नहीं है, शिवशक्तिरूपा स्त्रीगुरु का कटिदेश अतिक्षीण है, इनकी देहकान्ति पद्मराग-मणि के समान हैं,ये रक्तवस्त्र का परिधान कर शोभित हो रही हैं, करयुगल में रत्ननिर्मित कङ्कण हैं एवं चरणद्वय में रत्नमय नूपुर विद्यमान हैं; शरत्कालीन पूर्ण निशाकर के विशदकान्तिपूर्ण वदन में कुण्डलयुगल शोभित हो रहे हैं । ये स्वीय नाथ के वामभाग में अवस्थिता हैं तथा इनके करद्वय में वर एवं अभयमुद्रा सम्बद्ध हैं ।।21-22।।

हे देवि ! इस प्रकार, स्त्रीगुरु के उत्तम ध्यान का प्रकाशन आपके निकट किया है । आप यत्नपूर्वक इस ध्यान को गोपनता से रखें । कदापि प्रकाशित न करें ।।23।।

गुप्तसाधनतन्त्र में द्वितीय पटल समाप्त ॥2॥

तृतीयः पटलः

श्रीपार्वत्युवाच —

देवदेव महादेव भक्तानां मुक्तिदायक।
तव प्रसादात् प्राणेश श्रुतं साधनमुत्तमम् ॥1॥
पञ्चाङ्गोपासनां देव रहस्यादिपुरस्क्रियाम्।
तत्सर्वं ब्रूहि मे देव यदि स्नेहोऽस्ति मां प्रति ॥2॥

ईश्वर उवाच —

दिवारात्रिप्रभेदेन जपेन्मन्त्रमनन्यधीः।
न्यूनाधिकं जपेन्नैव दूषणं नास्ति पार्वति ॥3॥
पञ्चाचारेण देवेशि सर्वं कार्यं जपादिकम्।
स्वेच्छाचारोऽत्र गदितो महामन्त्रस्य साधने ॥4॥
प्रत्यहं परमेशानि एकैकं विप्रभोजनम्।
प्रातःकालं समारभ्य जपेन्मध्यन्दिनावधि ॥5॥

पार्वती ने कहा — हे देवदेव ! आप भक्तजनों के मुक्तिविधाता हैं। हे प्राणेश्वर ! आपके प्रसाद से उत्तम साधन का श्रवण कर चुकी हूँ ॥1॥

हे नाथ ! इस समय रहस्य-प्रकाश-पूर्वक पञ्चाङ्गोपासना को कहना है। हे देव ! यदि मेरे प्रति आपका स्नेह है तो पञ्चाङ्गोपासना के समस्त विवरण को प्रकाशित करें ॥2॥

ईश्वर ने कहा — साधक अनन्यचित्त होकर दिवारात्रि के प्रभेद से जप करें, प्रतिदिन एक नियम से जप करना है। किसी दिन न्यून, किसी दिन अधिक जप न करें। पार्वति ! इस नियम से साधन करने पर किसी प्रकार का दोष नहीं हो सकता है ॥3॥

हे देवेशि ! जपादि समस्त कार्य ही पञ्चाचार-क्रम से करना है। महामन्त्र के साधन के विषय में इस प्रकार स्वेच्छाचार को कहा गया है। सभी अपनी इच्छा के अनुसार जपसंख्या का नियम रख सकता है ॥4॥

हे परमेश्वरि ! उक्तरूप साधन-काल में, प्रातःकाल से आरम्भ कर, मध्याह्नकाल पर्यन्त एक नियम से जप करें एवं प्रतिदिन एक-एक ब्राह्मण को भोजन करावें ॥5॥

पूजां कृत्वा साधकेन्द्रः पुनर्जपनमाचरेत् ।
सायं सन्ध्यां ततः कृत्वा भोजनं स्वेच्छया नयेत् ॥6॥

भक्षन् ताम्बूलमत्स्यांश्च भक्षद्रव्यान् यथारुचि ।
भुञ्जानोवा हविष्यान्नं शाकं यावकमेव वा ॥7॥

एवं कृत्वा साधकेन्द्रो रात्रौ जपन माचरेत् ।
गते तु प्रथमे यामे तृतीयप्रहरावधि ॥8॥

स्ववामे शक्तिं संस्थाप्य जपेन्मन्त्रमनन्यधीः ।
शक्तियुक्तो भवेन्मर्त्यः सिद्धो भवति नान्यथा ॥9॥

कुलशक्तिं विना देवि यो जपेत् स तु पामरः ।
सिद्धिर्न जायते तस्य कल्पकोटिशतैरपि ॥10॥

अयने विषुवे चैव पूजयेद्विभवावधि ।
कुमारीं पूजयित्वा तु भोजयेद्विधिपूर्वकम् ॥11॥

साधक मध्याह्नकाल में जप का विराम कर, अभीष्ट देवता की अर्चना करें एवं अर्चनान्त में पुनः जप प्रारम्भ करें । अनन्तर सन्ध्या समय उपस्थित होने पर, सायंकालीन सन्ध्यावन्दनादि कार्यों का समापन कर, अपनी इच्छा के अनुसार भोजन करें ।।6।।

इस साधन में यथारुचि ताम्बूल, मत्स्य प्रभृति भक्ष्यद्रव्यों का भोजन करें अथवा हविष्यान्न, शाक या यावक-भोजन करके जप करें ।।7।।

साधक उक्त प्रकार से भोजन-व्यापार कर समापन कर, रात्रिकालीन जप को आरम्भ करें । रात्रि का प्रथम याम विगत होने पर स्वीय वाम भाग में शक्ति-संस्थापन पूर्वक एकाग्रचित्त से तृतीय प्रहर पर्यन्त जप करें । साधक-मानव शक्तियुक्त होकर साधन करने पर ही अवश्य सिद्ध होता है, इसकी अन्यथा नहीं होती ।।8-9।।

हे देवि ! जो साधक कुलशक्तिविहीन होकर जप करते हैं,वह पामर है । शतकोटिकल्प जप करने पर भी उनकी सिद्धि नहीं हो सकती ।।10।।

उत्तरायण, दक्षिणायन एवं विषुव-संक्रमण के दिन में अपने विभव के अनुसार देवी की पूजा करें । इसके अनन्तर अपनी शक्ति के अनुसार कुमारी की पूजा कर, उसे विधिपूर्वक भोजन करावें ।।11।।

शतमष्टोत्तरञ्चैव ब्राह्मणान् भोजयेत्ततः ।
शक्तिपूजां ततः कृत्वा भोजयेच्च यथाविधि ।।12।।
गुरवे दक्षिणां दद्यात् स्वर्णं वस्त्र समन्वितम् ।
यद्यदिष्टतमं लोके गुरवे तन्निवेदयेत् ।।13।।
गुरुसन्तोष मात्रेण किं न सिध्यति भूतले ।
गुरुरेव परं ब्रह्म नास्ति तत्त्वं गुरोः परम् ।।14।।
एवं कृते मन्त्रसिद्धिर्भवत्येव न संशयः ।
सर्वसिद्धिश्वरो भूत्वा विचरेद्भैरवो यथा ।
स धन्यः स च विज्ञानी शिवतुल्यो न संशयः ।।15।।

इति गुप्तसाधनतन्त्रे पार्वतीशिवसंवादे
तृतीयः पटलः ।।3।।

इसके अनन्तर अष्टोत्तरशत ब्राह्मणों को भोजन कराकर, यथाविधि शक्तिपूजा करनी चाहिए एवं भोजनादि के द्वारा उस शक्ति का सन्तोष-विधान करना चाहिए ।।12।।

इसके अनन्तर गुरु को स्वर्ण एवं वस्त्र-समन्वित दक्षिणा प्रदान करें । इहलोक में जो-जो द्रव्य साधक के लिए अभीष्ट हैं, उन सभी को ही गुरुदेव को निवेदन करना है ।।13।।

गुरु के सन्तोषमात्र से इस भूतल पर क्या सिद्ध नहीं हो सकता ? चूँकि गुरु ही परब्रह्म-स्वरूप हैं एवं गुरु से परम तत्त्व और कुछ भी नहीं है ।।14।।

इस प्रकार साधन करने पर निःसंशय-रूप से मन्त्रसिद्धि होती है एवं वह साधक सभी प्रकार की सिद्धियों का अधीश्वर बनकर, भैरव के समान सर्वत्र विचरण करते हैं । जो व्यक्ति उक्त प्रकार से साधन करते हैं, वे ही धन्य हैं, वे ही ज्ञानी हैं एवं वे ही साक्षात् शिवस्वरूप बन सकते हैं, इसमें कोई संशय नहीं है ।।15।।

गुप्तसाधनतन्त्र में तृतीय पटल समाप्त ।।3।।

चतुर्थः पटलः

श्रीपार्वत्युवाच —

देवदेव महादेव संसारार्णवतारक ।
अति शीघ्रं फलं देव केनोपायेन लभ्यते ।।1।।

श्रीशिव उवाच —

शृणु पार्वति वक्ष्यामि अतिगुप्ततरं महत् ।
प्रकाशात् सिद्धिहानिः स्यात्तस्माद् यत्नेन गोपयेत् ।।2।।
स्वशक्तिं परशक्तिं वा दीक्षितांयौवनान्विताम् ।
विदग्धां शोभनां शय्यां घृणालज्जाविवर्जिताम् ।।3।।
तामानीय साधकेन्द्रो दद्यात् पाद्यादिकं शुभम् ।
पञ्चाचारेण तां शक्तिं पूजयित्वा यथाविधि ।।4।।
शतं शीर्षे शतं भाले शतं सिन्दूरमण्डले ।
शतं मुखे शतं कण्ठे शतं हृदयमण्डले ।।5।।
शतयुग्मं स्तनद्वन्द्वे शतं नाभौ जपेत् सुधीः ।
योनिपीठे शतं जप्त्वा साधकः स्थिरमानसः ।।6।।

पार्वती ने कहा — हे देवदेव ! हे महादेव ! आप मानवों को संसार-रूप-सागर से परित्राण करतें हैं । हे देव ! किस उपाय के अवलम्बन से मानवगण शीघ्र फललाभ कर सकते हैं, सम्प्रति उसी का कीर्त्तन करें ।।1।।

शिव ने कहा — हे पार्वति ! मैं अति गुप्ततर साधनोपाय को बता रहा हूँ, श्रवण करें । इस साधन को प्रकट करने पर, सिद्धिकार्य में व्याघात उत्पन्न होती है, अतः सर्वप्रयत्न से इसे गोपित रखें ।।2।।

स्वीय शक्ति हो या पराशक्ति ही हो, दीक्षिता नवयौवनान्विता नाना गुणशालिनी परमासुन्दरी घृणालज्जा-विवर्जिता रमणी को अपनी शय्या पर आनयन कर, पाद्यादि विविध उपहारों के द्वारा भक्तिपूर्वक अर्चना करें । इस प्रकार पञ्चाचार-क्रम से उस शक्ति की यथाविधि अर्चना कर उसके मस्तक पर शतबार, कपाल पर शतबार, सिन्दूर मण्डल पर शतबार,मुख में शतबार, कण्ठ में शतबार, हृदयमण्डल पर शतबार, स्तनद्वय में द्विशतबार एवं नाभि में शतबार इष्टमन्त्र का जप करना चाहिए । इसके अनन्तर साधक एकाग्र-चित्त होकर उस शक्ति के योनि-पीठ पर शतबार इष्ट-मन्त्र का जप करें ।।3-6।।

एवं सहस्त्रं संजप्य देवीं तत्र विचिन्तयेत् ।
स्वयं शिवस्वरूपश्च चिन्तयेत् साधकोत्तमः ॥7॥

शिवमन्त्रेण देवेशि स्वलिङ्गं पूजयेदथ ।
ताम्बूलं तन्मुखे दत्त्वा साधको हृष्टमानसः ॥8॥

तदनुज्ञां समादाय योनौ लिङ्गं विनिक्षिपेत् ।
धर्माधर्महरिर्दीप्ते आत्माग्नौ मनसा श्रुचा ।
सुषुम्नावर्त्मना नित्यमक्ष वृत्तीर्जुहोम्यहम् ॥9॥

स्वाहेत्यनेन मन्त्रेण हुनेत् सर्वसमृद्धये ।
ततो जपेत् सहस्त्रं वै शक्तियुक्तो भवेन्नरः ॥10॥

शतं वापि प्रजप्तव्यं ततो न्यूनं न कारयेत् ।
पूर्णाहुतिं ततो दद्यान्मन्त्रेणानेन साधकः ॥11॥

प्रकाशाकाशमन्त्राभ्यामवलम्ब्योन्मनीश्रुचा ।
धर्माधर्मकलास्नेहपूर्णमग्नौ जुहोम्यहम् ॥12॥

स्वाहेत्यनेन मन्त्रेण पूर्णाहुतिं समाचरेत् ।
शुक्रोत्सारणकाले च देव्यै शुक्रं समर्पयेत् ॥13॥

इस प्रकार साधक उस शक्ति के देह में सहस्त्र जप कर, उसे इष्टदेवता-स्वरूप में चिन्तन करें एवं वह स्वयं भी साक्षात् शिव है – ऐसा ज्ञान करें ।।7।।

इसके अनन्तर अपने मुख में एवं उस शक्ति के मुख में ताम्बूल प्रदान कर, शक्ति की अनुज्ञा को ग्रहण करने के उपरान्त मूलग्रन्थ में लिखित विधि से अवलम्बन-पूर्वक साधन करें ।।8-9।।

बाद में 'धर्माधर्म हरिर्दीप्ते –' इत्यादि मन्त्रके अन्त में 'स्वाहा' शब्द का प्रयोग कर, होम करना चाहिए । इस प्रकार होम करने पर, साधक को सर्वप्रकार की समृद्धियों का लाभ होता है । बाद में शक्तियुक्त होकर सहस्त्र या शत-संख्यक इष्टमन्त्र का जप करें । जिससे शत से न्यून न हो जाय, वैसा करना चाहिए । उसके बाद मूल में लिखित 'प्रकाशाकाशमन्त्राभ्यां –' इत्यादि मन्त्र के अन्त में 'स्वाहा' शब्द का प्रयोग कर, पूर्णाहुति प्रदान करना चाहिए एवं शुक्रोत्सारणकाल में महादेवी को वह शुक्र निवेदन करना चाहिए ।।10-13।।

एवं कृते मन्त्रसिद्धिर्नात्र कार्य्या विचारणा ।
यं यं प्रार्थयते कामं तं तं प्राप्नोति निश्चितम् ॥14॥
रोगी रोगात् प्रमुच्यते धनेन च धनाधिपः ।
वायुतुल्यबलो लोके दुर्जयः शत्रुमर्दनः ॥15॥
कामतुल्यश्च नारीणां रिपूणां शमनोपमः ।
एतत् कल्पेन देवेशि किं न सिध्यति भूतले ।
अष्टैश्वर्यमवाप्नोति स एव श्रीसदाशिवः ॥16॥

इति गुप्तसाधनतन्त्रे पार्वतीशिवसंवादे
चतुर्थः पटलः ॥4॥

जो साधक इस प्रकार साधन करते हैं, उनकी मन्त्रसिद्धि निश्चय ही होती है । इसकी अन्यथा का कदापि चिन्तन भी न करें । उक्त-रूप में साधन के द्वारा सिद्धिलाभ होने पर, साधक जिस-जिस की कामना करता है, निश्चय ही उसे वह-वह काम्यद्रव्य प्राप्त हो सकता है ।।14।।

रोगी के रोग के प्रतिकार की कामना से उक्त-रूप साधन करने पर, तत्क्षण रोग से मुक्ति प्राप्त होती है एवं धनकामी व्यक्ति कुबेर-तुल्य धनवान बन सकता है । बल की वृद्धि की कामना से इस साधन को करने पर वायुतुल्य बलशाली बन जाता है । कोई उसे पराजित नहीं कर सकता है एवं वह व्यक्ति शत्रुवर्ग का विनाश कर सकता है ।।15।।

नारियों के अनुराग-लाभ की कामना करके, उक्त प्रकार साधन को करने पर, रमणीगण उसे कामदेव के समान दर्शन करती हैं । शत्रुदमन की अभिलाषा से इस प्रकार साधन करने पर, अरातिवर्ग उसे कृतान्तवत् ज्ञान करते हैं । हे देवेशि ! उक्त विधि का अवलम्बन करके साधन करने पर, इस भूतल पर, साधक के लिए कुछ भी असिद्ध नहीं रह जाता है; यहाँ तक कि अणिमादि अष्ट-सिद्धियाँ भी साधक को प्राप्त हो जातीं हैं । इस प्रकार, वह साधक साक्षात् सदाशिव-तुल्य बन सकता है ।।16।।

गुप्तसाधनतन्त्र में चतुर्थ पटल समाप्त ॥4॥

पञ्चमः पटलः

श्रीपार्वत्युवाच —

हे ईश्वर जगत्तात मम प्राणेश्वर प्रभो ।
इदानीं श्रोतुमिच्छामि मासाधिकपुरस्क्रियाम् ॥1॥

श्रीशिव उवाच —

एक मासे तु षड्लक्षं द्विमासे रविलक्षकम् ।
मासत्रये तु देवेशि रन्ध्रयुग्मकलक्षकम् ॥2॥
चतुर्मासे महेशानि चतुर्विंशतिलक्षकम् ।
पञ्चमासे महेशानि त्रिंशल्लक्षं सदा जपेत् ॥3॥
षण्मासे प्रजपेन्मन्त्रं षट्त्रिंशल्लक्षकं सदा ।
सप्तमासे महेशानि द्विचतुर्ल्लक्षकं सुधीः ॥4॥
अष्टमासे सुरेशानि गजवेदश्च लक्षकम् ।
मासे तु नवमे देवि वेदबाणश्च लक्षकम् ॥5॥
दशमासे तु संप्राप्ते षष्टिलक्षञ्च संजपेत् ।
मासे चौकादशे प्राप्ते लक्षं कालरसं जपेत् ।
वर्षे पूर्णे महेशानि शतलक्षं जपेत् सुधीः ॥6॥

पार्वती ने कहा — हे ईश्वर ! आप जगत् के जनक हैं । हे प्राणेश्वर ! आप सभी के प्रभु हैं । मैं इस समय मासाधिक पुरस्क्रिया को सुनने की इच्छा कर रही हूँ अर्थात् वर्ष के प्रथम महीने से आरम्भ कर, द्वितीयादि महीनों में किस प्रकार जप-संख्या में वृद्धि करते हुए एक वर्ष पर्यन्त जप करना चाहिए, मेरे लिए उस प्रक्रिया का उपदेश करें ।।1।।

शिव ने कहा — वर्ष के प्रथम महीने में छः लाख बार इष्टमन्त्र का जप करना चाहिए । बाद में द्वितीय महीने में द्वादश लाख, तृतीय महीने में अष्टादश लाख, चतुर्थ महीने में चतुर्विंशति (24) लाख, पञ्चम महीने में तीस लाख, षष्ठ महीने में छत्तीस लाख, सप्तम महीने में बयालीस लाख, अष्टम महीने में अड़तालीस लाख, नवम महीने में चौवन लाख, दशम महीने में साठ लाख, एकादश महीने में छाछठ लाख एवं द्वादश महीने में सौ लाख जप करना चाहिए ।।2-6।।

अनेनैव विधानेन यो जपेद्भुवि मानवः ।
केवलं जपमात्रेण मन्त्राः सिद्धा भवन्ति हि ।।7।।

पञ्चाचारेण देवेशि सर्वं कार्यं जपादिकम् ।
पूर्ववच्छक्तिपूजाञ्च कुमारीञ्चैव पूजयेत् ।।8।।

यथाशक्ति ब्राह्मणञ्च भोजयेद्विधिपूर्वकम् ।
तथा तेन प्रकारेण शक्तिभोजनमाचरेत् ।।9।।

शक्तिं विना महेशानि सदाहं शवरूपकः ।
शक्तियुक्तो यदा देवि शिवोऽहं सर्वकामदः ।।10।।

शक्तियुक्तं जपेन्मन्त्रं न मन्त्रं केवलं जपेत् ।
सावित्रीसहितो ब्रह्मा सिद्धिश्च नगनन्दिनि ।।11।।

द्वारावत्यां कृष्णदेवः सिद्धोऽभूत् सत्यया सह ।
यथा गोपवधूसङ्गान्मम सिद्धिर्वरानने ।।12।।

इसी प्रकार नियम के अनुसार भूतल पर जो मानव एक वर्ष पर्यन्त जप करता है, उसे केवल जप-मात्र से ही मन्त्र-सिद्धि प्राप्त होती है ।।7।।

हे देवेशि ! पञ्चाचार-क्रम से पूर्वोक्त जपादि कार्यों को करें एवं पूर्ववत् शक्ति-पूजा एवं कुमारी-पूजा करें ।।8।।

इसके अनन्तर साधक विधिपूर्वक यथाशक्ति ब्राह्मण भोजन एवं शक्ति-भोजन करावें ।।9।।

हे महेशानि ! शक्ति के बिना मैं भी शव-रूप बन जाता हूँ एवं जिस समय मैं भी शक्ति से युक्त बन जाता हूँ, तभी साधक के सर्वकामप्रद शिव कहा जाता हूँ ।।10।।

अतः शक्तियुक्त मन्त्र का जप करें, कदापि शक्ति-पूजा से विहीन केवल मन्त्र-जप से किसी प्रकार कार्य की सिद्धि नहीं होती है । हे गिरिसूते ! ब्रह्मा भी सावित्री की सहायता से ही सिद्धिलाभ कर चुके हैं ।।11।।

श्रीकृष्ण द्वारका में सत्यभामा की सहायता को प्राप्त कर सिद्ध हुए थे । हे सुन्दरि ! जिस प्रकार श्रीकृष्ण गोपाङ्गनाओं के सङ्गलाभ करके ही सिद्धिलाभ किये थे, मेरी सिद्धि भी उसी प्रकार शक्ति संयोग-जन्य है – ऐसा जानें ।।12।।

स शिवोऽहं महादेवि केवलं शक्तियोगतः ।
शाक्तियोगेन देवेशि यदि सिद्धिर्न जायते ।
तदैव परमेशानि मम वाक्यं वृथा भवेत् ।।13।।
गङ्गाकाशी-प्रयागादिः पुष्करं नैमिषं तथा ।
बदरी च तथा रेवा उत्कलं गण्डकी तथा ।।14।।
सिन्धु सरस्वती चैव पीठानि विधिनानि च ।
सर्वं त्यक्त्वा महेशानि स्त्रीसङ्गं यत्नतश्चरेत् ।।15।।
स्त्रीसङ्गे सिद्धिमाप्नोति मम वाक्यं न चान्यथा ।
यद्दत्तं जलगण्डूषं शक्तिवक्त्रे सुरेश्वरि ।।16।।
सिन्धुरूपं परेशानि तज्जलं नात्र संशयः ।
अन्नन्तु शैलतनये स्थलाचलसमं भवेत् ।।17।।
एवं संख्या तु सर्वत्र ज्ञातव्या कुलसाधकैः ।
सदेष्टदेवीभावे तु भोजयेत्ताञ्च यत्नतः ।।18।।

हे महेशानि ! केवल शक्ति-संयोग-वश ही मैं शिव बन गया हूँ । हे देवेशि ! यदि शक्ति-संयोग होने पर भी साधक को सिद्धिलाभ नहीं होती है, तो मेरे वाक्य को वृथा जानें ।।13।।

हे महेश्वरि ! गङ्गा, काशी, प्रयागादि, पुष्कर, नैमिषारण्य, बदरिकाश्रम, रेवा, उत्कल, गण्डकी, सिन्धु, सरस्वती प्रभृति विविध पीठस्थान विद्यमान हैं, सिद्धिकामी साधक उन सभी पीठस्थानों का परित्याग कर, यत्नपूर्वक स्त्रीसङ्गति करें ।।14-15।।

हे सुरेश्वरि ! स्त्री-सङ्गति से ही साधक को सिद्धि प्राप्त होती है । मेरे इस वाक्य की अन्यथा कदापि नहीं होती है । शक्ति के मुख में यदि एक गण्डूषमात्र जल प्रदान किया जाय, तो वह भी सागर-तुल्य बन जाता है, इसमें कोई संशय नहीं है । अर्थात् शक्ति को एक गण्डूष (घूँट) जल-दान करने पर भी वह सागर-परिमित जल-दान के बराबर फलप्राप्ति का कारण बन जाता है और शक्ति को एक ही अन्न (कण) प्रदान करने पर, वह अन्नाचल (अन्न-पर्वत) दान के तुल्य फल को प्राप्त करता है ।।16-17।।

इसी प्रकार शक्ति को जो-जो द्रव्य प्रदान किया जाता है, उनसे उक्त प्रकार अनन्त फलों का लाभ होता है । अतः (कुल साधक) सर्वदा शक्ति को अभीष्ट देवता समझकर, यत्नपूर्वक भोजन करावें ।।18।।

क्रोधोन्मोहाच्छलाद्वापि यदि पूजां न कारयेत् ।
कल्पकोटिशतेनापि तस्य सिद्धिर्न जायते ॥19॥
एतत् सिद्धतमं देवि तव स्नेहात् प्रकाशितम् ।
न वक्तव्यं पशोरग्रे शपथो मे त्वयि प्रिये ॥20॥

इति गुप्तसाधनतन्त्रे पार्वतीशिवसंवादे
पञ्चमः पटलः ॥5॥

यदि क्रोधवश, महादेव अथवा छलवश कोई साधक शक्तिपूजा नहीं करता है, तो शतकोटि कल्प पर्यन्त जप करने पर भी उसे सिद्धिलाभ नहीं हो सकता है ।।19।।

हे देवि ! आपके स्नेह के वशवर्ती होकर इस सिद्धमत को प्रकाशित किया हूँ । इसे कदापि पश्वाचारी के निकट प्रकट न करें । हे प्रिये ! यदि कभी इस कथन को पश्वाचारी के निकट व्यक्त करती हैं, तो आपको मेरा शपथ लगेगा ।।20।।

गुप्तसाधनतन्त्र में पञ्चम पटल समाप्त ॥5॥

षष्ठः पटलः

श्रीदेव्युवाच —

शिवशङ्कर ईशान ब्रूहि मे परमेश्वर ।
दक्षिणायाः प्रकारन्तु सूचितं न प्रकाशितम् ॥1॥
इदानीं श्रोतुमिच्छामि यदि तेऽस्ति कृपा मयि ।
दक्षिणा सिद्धिदा सिद्धा त्रैलोक्येषु सुदुर्लभा ॥2॥
यामाराध्य महादेव सृष्टिकर्त्ता प्रजापतिः ।
यामाराध्य महाविष्णुः पालयत्यखिलं जगत् ॥3॥
संहारकाले च हरो रुद्रमूर्त्तिधरः परः ।
तां विद्यां वद ईशान यद्यहं तव वल्लभा ॥4॥

श्रीशिव उवाच —

दक्षिणायाः प्रकारन्तु कालीतन्त्रादियामले ।
अतः परं महेशानि विरता भव सुन्दरि ॥5॥

देवी ने जिज्ञासा की — हे शिव ! हे शङ्कर ! हे ईशान ! हे परमेश्वर ! सम्प्रति दक्षिणकालिका की आराधना-विधि के उपदेश प्रदान करें । इससे पूर्व उक्त आराधना की सूचना-मात्र प्रदान किये हैं । हे प्रभो ! सम्प्रति उन दक्षिणकालिका की आराधना-विधि को प्रकाशित करें ।।1।।

हे नाथ ! यदि मेरे प्रति आपमें स्नेह का संचार होता है, तो जिस प्रकार से दक्षिणकालिका की सिद्धि का लाभ किया जा सकता है, उसे मेने निकट प्रकाशित करें । उस आराधना (– प्रक्रिया) का श्रवण करने के लिए मुझमें इच्छा उत्पन्न हुई है । यह त्रिभुवनों में ही दुर्लभ है ।।2।।

हे महादेव ! जिन दक्षिणकालिका की आराधना कर, प्रजापति सृष्टिकर्त्ता बने हैं, जिनकी आराधना के बल से महाविष्णु अनन्त ब्रह्माण्ड का पालन कर रहे हैं और जिनकी भजना कर, रुद्रमूर्तिधारी हर, संहारकाल में प्रजाओं का हरण कर लेते हैं । हे ईशान ! यदि मेरे प्रति आपका अनुराग है, तो उस महाविद्या को मेरे निकट प्रकाशित करें ।।3-4।।

शिव ने कहा — हे देवि ! कालीतन्त्रादि में एवं यामल में उक्त महाविद्या प्रकाशित हैं । इस समय मैं पुनः उन्हें प्रकाशित करने की इच्छा नहीं कर रहा हूं । हे सुन्दरि ! आप इस अध्यवसाय से विरता हो जायँ ।।5।।

श्रीपार्वत्युवाच —

एतत् प्रकारं देवेश यदि मे न प्रकाशितम् ।
प्राणत्यागं करिष्यामि पुरतस्ते न संशयः ॥6॥

श्रीशिव उवाच —

शृणु देवि प्रवक्ष्यामि दक्षिणाकल्पमुत्तमम् ।
यस्याः प्रसङ्गमात्रेण भवाब्धौ न निमज्जति ॥7॥

स्वरान्तं वह्निसंयुक्तं वामनेत्रविभूषितम् ।
बिन्दुनादकलायुक्तं मन्त्रं त्रैलोक्यमोहनम् ॥8॥

भैरवोऽस्य ऋषिः प्रोक्त उष्णिक् छन्द उदाहृतम् ।
दक्षिणाकालिका प्रोक्ता देवता सर्वसिद्धिदा ॥9॥

मायाबीजं बीजमस्याः कूर्चबीजन्तु शक्तिकम् ।
निजबीजं महेशानि कीलकं सर्वमोहनम् ॥10॥

पुनः पार्वती ने कहा — हे नाथ ! यदि आप मेरे निकट उस विद्या को प्रकाशित नहीं करते हैं, तो मैं आपके समक्ष निश्चय ही प्राणत्याग कर दुँगी ॥6॥

शिव ने कहा — हे देवि ! मैं आपके निकट श्रीदक्षिणकालिका-कल्प को बता रहा हूँ, श्रवण करें । इन दक्षिणादेवी के प्रसङ्ग-मात्र (करने) से भी कोई भवसागर में निमग्न नहीं होता है ॥7॥

ककार, रेफ, ईकार एवं नादबिन्दु अर्थात् क्, र्, ई एवं ँ (चन्द्रबिन्दु) — इन वर्णों के योग में 'क्रीँ' यह बीज बनता है । यही दक्षिणकालिका का मन्त्र है । यह मन्त्र त्रैलोक्य को मोहित कर देता है ॥8॥

इस मन्त्र के ऋषि हैं भैरव, छन्द हैं उष्णिक् एवं देवता हैं दक्षिणकालिका । ये सभी प्रकार की सिद्धियों को प्रदान करती हैं । 'ह्रीँ' यह बीज ही उक्त मन्त्र का बीज है । 'हुं' यह बीज इसकी शक्ति है । 'क्रीँ' यह बीज उक्त विद्या का कीलक है । उक्त विद्या सभी को मोहित करती है । धर्म, अर्थ, काम एवं मोक्ष के विषय में इसका विनियोग होता है अर्थात् उक्त विद्या की आराधना करने पर,

धर्मार्थकाममोक्षेषु विनियोगः प्रकीर्त्तितः ।
कालीतन्त्रादितन्त्रेषु पूजायागादि पार्वति ।
लिखितञ्च मया पूर्वं किमन्यच्छ्रोतुमिच्छसि ।।11।।

श्रीदेव्युवाच —

ध्यानानुरूपिणीं मूर्त्तिं यदि पूजादिकञ्चरेत् ।
आचारं कीदृशं तत्र को वा तत्र प्रपूजयेत् ।।12।।

भूतशुद्धौ महादेव यदि देहन्तु नाशयेत् ।
कुत्र स्थले भवेद्दृष्टिरमृतं कुत्र सञ्चरेत् ।।13।।

आलीढ़ं कीदृशं नाथप्रत्यालीढ़न्तु कीदृशम् ।
कथं वा कालिका देवी श्मशानालयवासिनी ।।14।।

निशा वा कीदृशी नाथ कीदृशी वा महानिशा ।
भावभेदे महादेव तद्वदस्व दयानिधे ।।15।।

साधक को धर्म, अर्थ, काम एवं मोक्ष – इन चतुर्वर्ग की प्राप्ति होमविधिपूर्वक ही होती है । हे पार्वति ! कालीतन्त्रादि में इस विद्या की पूजा-प्रणाली को भी मैं बता चुका हूँ । हे देवि ! इसके बाद आपको और किन विषयों को सुनने की इच्छा हो रही है, इसे प्रकट करें ।।9-11।।

पुनः देवी ने जिज्ञासा की – यदि ध्यान के अनुसार मूर्त्ति की कल्पना करके पूजा करना है, तो किस प्रकार आचार (प्रक्रिया) से पूजा करनी चाहिए एवं कैसा व्यक्ति उस पूजा-कार्य का अधिकारी है ? ।।12।।

हे महादेव ! यदि भूतशुद्धि से देह का विनाश हो जाता है, तो किस स्थल पर दृष्टि रहेगी एवं किस स्थल पर अमृत-सञ्चरण होगा ? ।।13।।

हे नाथ ! आपने पहले आलीढ़ एवं प्रत्यालीढ़ पद का उल्लेख किया है । अब मुझे विशेष प्रकार से इस विषय का उपदेश करें कि – कैसा होने पर आलीढ़ होता है एवं किसे प्रत्यालीढ़ कहा जा सकता है एवं किस कारण से कालिकादेवी श्मशानवासिनी बनीं ? निशा एवं महानिशा किसे कहते हैं ? हे महादेव ! आप मेरे प्रति दया प्रकट करके, मेरे द्वारा जिज्ञासित प्रश्नों के यथावत् उत्तरों को प्रदान करें ।।14-15।।

श्रीशिव उवाच —

शृणु देवि प्रवक्ष्यामि यन्मां त्वं परिपृच्छसि ।
तत् तत् सर्वं प्रवक्ष्यामि सावधानावधारय ।।16।।
पूजायाः पूर्वदिवसे आदौ क्षौरादिकञ्चरेत् ।
हविष्यान्नं भोजनञ्च अथवापि निराभिषम् ।।17।।
ततः परस्मिन् दिवसे प्रातः स्नात्वा तु साधकः ।
नित्यपूजां समाप्यादौ देववच्छुद्धमानसः ।।18।।
गुरुर्वा गुरुपुत्रो वा गुरुपत्नी च सुव्रते ।
आगमोक्तविधानेन अधिकारी गुरुः स्वयम् ।।19।।
गुरोरभावे देवेशि स्वयं पूजादिकञ्चरेत् ।
एभिर्विना महेशानि तान्त्रिकैर्देशिकैर्यदि ।।20।।
तस्य पूजाफलं सर्वं भुज्यते यक्षराक्षसैः ।
अतएव महेशानि गुरुः कर्त्ता विधीयते ।।21।।

शिव ने कहा — हे देवि ! आप मुझसे जिन-जिन विषयों की जिज्ञासा कर रही हैं, उन सभी को यथार्थरूप में बता रहा हूँ, अवहितचित्त होकर श्रवण करें ।।16।।

जिस दिन देवी की पूजा करना है, उसके पहले दिन क्षौरादि कर्मों को करके हविष्यान्न अथवा निरामिष भोजन ग्रहण पूर्वक संयत होकर रहें ।।17।।

इसके अनन्तर दूसरे दिन साधक प्रातःस्नानादि नित्यकार्य एवं नित्य-पूजा का समापन कर, देवों के समान शुद्धचित्त बन जावें ।।18।।

सुचरिते ! साधना-कार्य में गुरु, गुरुपुत्र अथवा गुरुपत्नी – ये ही प्रशस्त हैं । विशेषतः आगमोक्त विधान में स्वयं गुरुदेव ही विशेषरूप से अधिकारी हैं – ऐसा जानें ।।19।।

हे देवेशि ! गुरु के अविद्यमान होने पर, साधक स्वयं पूजादि कार्यों को करें । उक्त अधिकारियों को छोड़कर अन्य तन्त्रज्ञ व्यक्ति के द्वारा यदि कोई पूजादि कार्यों का सम्पादन करते हैं,तो उस पूजा के फल को यक्ष एवं राक्षसगण भक्षण करते हैं । हे महेशानि ! इसीलिए गुरु ही पूजादि कार्यों के कर्त्ता हैं – ऐसा जानें ।।20-21।।

ब्रह्मरूपो गुरुः साक्षाद् यदि पूजादिकञ्चरेत् ।
तत्तत् सर्वं महेशानि शतकोटिगुणम्भवेत् ॥22॥
अथवा परमेशानि स्वयं पूजादिकञ्चरेत् ।
स्वयं पूजादिकं कृत्वा पूजाद्रव्यादिकञ्च यत् ॥23॥
तत् सर्वं परमेशानि गुरोरग्रे निवेदयेत् ।
गुरौ दत्ते महेशानि सर्वं कोटिगुणं भवेत् ॥24॥
गुरुपत्नी महेशानि यदि पूजादिकञ्चरेत् ।
बलिदानादिकं सर्वं तत्र होमं विवर्जयेत् ॥25॥
होमीयद्रव्यमानीय देव्यग्रे स्थापयेद्बुधः ।
मूलमन्त्रं समुच्चार्य महादेव्यै निवेदयेत् ।
तेन होमफलं जातं न चाग्नौ होमयेद्बुधः ॥26॥
गुरुं विलङ्घ्य शास्त्रेऽस्मिन्नाधिकारी सुरोऽपि च ।
गुरुणा यत् कृतं देवि तत् सर्वमक्षयं भवेत् ॥27॥

हे महेश्वरि ! गुरुदेव स्वयं ब्रह्मस्वरूप हैं । यदि वह पूजादि कार्यों का सम्पादन करते हैं, तव वह पूजा शतकोटि गुण अधिक फलप्रदान करती है ॥22॥

हे परमेश्वरि ! गुरु के अविद्यमान रहने पर, स्वयं पूजादि कार्यों को करें । परन्तु स्वयं पूजादि कार्यों को करने पर भी समस्त पूजा-द्रव्यादि को गुरुदेव के समक्ष निवेदन करना चाहिए । गुरु को पूजा-द्रव्य समर्पित करने पर ही उस पूजा से शतकोटि गुणा अधिक फल प्राप्ति होता है ॥23-24॥

जिस समय गुरुपत्नी पूजादि कार्यों को करें, (उस समय) उस पूजा में बलिदान आदि समस्त कार्यों को ही करें,केवल होम न करें । होमीय द्रव्यों को महादेवी के अग्र में स्थापित करें । इसके अनन्तर मूलमन्त्र के समुच्चारणपूर्वक उन समस्त द्रव्यों को महादेवी को निवेदित कर देना चाहिए । वैसा करने पर, होम के फल की प्राप्ति होती है, अग्नि में आहुति प्रदान करने की आवश्यकता नहीं रह जाती है ॥25-26॥

उक्त साधनकार्य में गुरु का अतिक्रमण कर, देवगणों को भी पूजादि के अधिकारी-रूप में न जानें । हे देवि ! गुरुदेव जिस कार्य का सम्पादन करते हैं, वह अक्षय फलप्रद होता है ॥27॥

ऋत्विक्पुत्रादयो देवि स्मृत्युक्ता बहवः प्रिये ।
तन्त्रोक्तं परमेशानि नान्यद्वक्त्रं विलोकयेत् ॥28॥
इष्टपूजादिकं सर्वं यः कुर्याज्जनसन्निधौ ।
तस्य सर्वार्थहानिः स्यात् क्रुद्धा भवति चण्डिका ॥29॥
वरं पूजा न कर्त्तव्या न कुर्याज्जनसन्निधौ ।
अन्यसन्निहिते देवि यदि पूजापरो भवेत् ॥30॥
विष्णुतन्त्रोक्तपूजादि तत्तन्मुद्रां प्रदर्शयेत् ।
तेन पूजादिकं जातं न च व्यक्तं कदाचन् ॥31॥
वामकुक्षौ स्थितं पापं पुरुषं कज्जलप्रभम् ।
तस्य संहरणार्थाय महती प्रकटीकृता ॥32॥
लिङ्गदेहो महेशानि तस्य देहो न संशयः ।
पापदेहं भवेद्दग्धं स्वदेहं नैव नाशयेत् ॥33॥

स्मृत्यादि शास्त्रों में, पुरोहित-पुत्र इत्यादि अनेक अधिकारियों का कथन किया गया है, किन्तु हे प्रिये ! तन्त्रोक्त कार्य में अन्य व्यक्ति का मुखावलोकन भी न करें ।।28।।

जो व्यक्ति अन्यान्य जन के सन्निधान में इष्टपूजादि तन्त्रोक्त कार्यों को करते हैं, उनके सर्वार्थ की हानि होती है एवं भगवती चण्डिका देवी भी क्रुद्ध हो जाती हैं । बल्कि तन्त्रोक्त पूजादि कार्यों को न करना ही उचित है, फिर भी जन-सन्निधान में पूजा करना उचित नहीं है । हे देवि ! यदि कभी भी अन्य जन के समक्ष में तन्त्रोक्त पूजादि कार्य करना ही पड़े तो उस पूजादि में विष्णु-तन्त्रोक्त मुद्रादि का प्रदर्शन करना चाहिए । वैसा करने पर पूजादि के व्यक्त हो जाने की सम्भावना नहीं रहती अर्थात् तन्त्रोक्त कार्यों को सर्वथा गुप्तरूप से रखें । जिससे वह प्रकाशित न हो सके, वैसा ही करना चाहिए ।।29-31।।

उदर के वामभाग में जो कज्जलप्रभ पाप-पुरुष विद्यमान है, उसके संहार के लिए जिस प्रकार कार्यप्रणाली का अवलम्बन करना चाहिए, वह प्रकाशित है । यह लिङ्गदेह अर्थात् स्थूल शरीर ही उस पाप-पुरुष का देह है, यह देह ही 'पापदेह' के नाम से विख्यात है । इस पापदेह को ही दग्ध किया जायगा, प्रकृत (वास्तविक) देहनाश नहीं किया जायगा । भूतशुद्धि के समय यह पापमय स्थूल शरीर ही दग्ध होता है ।।32-33।।

आलीढ़ं वामपादन्तु प्रत्यालीढ़न्तु दक्षिणम्।
संहाररूपिणी काली जगन्मोहनकारिणी ॥34॥

वह्निरूपा महामाया सत्यं सत्यं न संशयः।
अतएव महेशानि श्मशानालयवासिनी ॥35॥

आलीढ़-पादा सा देवी प्रत्यालीढ़ा क्षणे-क्षणे।
अनन्तरूपिणीं श्यामां को वक्तुं शक्यते प्रिये ॥36॥

अनन्तरूपिणी श्यामा चतुर्वर्गफलप्रदा।
गुरुणा यस्य यत् प्रोक्तं तत्तस्य ब्रह्मसंहितम् ॥37॥

निशा तु परमेशानि सूर्ये चास्तमुपागते।
प्रहरे च गते रात्रौ घटिके द्वे परे च ये ॥38॥

वाम पाद को 'आलीढ़' एवं दक्षिण पाद को 'प्रत्यालीढ़' कहा जा सकता है। यह संहाररूपिणी काली ही अनन्त जगत् का मोहन कर लेती है ॥34॥

यह महामाया वह्निरूपा हैं। हे देवि ! मेरे वाक्य को सत्य-सत्य जानें, किसी प्रकार संशय न करें। हे महेशानि ! वह महामाया वह्निरूपा होने के कारण ही श्मशान में निवास करती हैं ॥35॥

दक्षिणकालिकादेवी सर्वदा ही आलीढ़पादा हैं। ये क्षण-क्षण में प्रत्यालीढ़ पादा बन जाती हैं अर्थात् ये सर्वदा ही वाम पाद पर निर्भर करके अवस्थिता हैं, कभी-कभी दक्षिण पाद पर भी निर्भर करती हैं। ये अनन्त रूपिणी हैं। हे प्रिये ! कब कौन-सा रूप धारण कर लें, इसका कोई निश्चय नहीं है। अतः कोई भी इनके स्वरूप का निर्णय नहीं कर सकता है ॥36॥

श्यामा अनन्त रूपिणी हैं। अतः इनके स्वरूप का निर्णय हो ही नहीं सकता है। ये धर्म, अर्थ, काम एवं मोक्ष – इन चतुर्वर्गों को प्रदान करती हैं। इन श्यामा के विषय में गुरु जिसे जिस प्रकार उपदेश करते हैं, उसके लिए गुरु का वह उपदेश ही ब्रह्म-संहिता-स्वरूप है। अतः साधक गुरु के उपदेश के अनुसार श्यामा की आराधना करने पर, निश्चय ही सिद्धि लाभ कर सकते हैं ॥37॥

हे परमेश्वरि ! सूर्यदेव अस्तमित होने पर ही 'निशा' कही जाती हैं। रात्रि का एक प्रहर विगत होने पर घटिकाद्वय का समय 'महानिशा' कही जाती है एवं

महानिशा समाख्याता ततश्चातिमहानिशा ।
अर्द्धरात्रे गते देवि पशुभावेन पूजयेत् ॥39॥
दशदण्डे तु या पूजा तत्सर्वमक्षयं भवेत् ।
षष्ठक्रोशे महेशानि तत् सर्वममृतोपमम् ॥40॥
सप्तमक्रोशके देवि सर्वं क्षीरोपमं भवेत् ।
अष्टमक्रोशके देवि द्रव्यतुल्यं न संशयः ॥41॥
अतःपरं महेशानि विषतुल्यं न संशयः ।
एतत् सर्वं महेशानि पशुभावे मयोदितम् ॥42॥

इसके बाद 'अतिमहानिशा' होती है । रात्रि का प्रथमार्द्ध विगत होने पर, पशु-भाव से देवी की पूजा करनी चाहिए ।।38-39।।

दस दण्ड के समय जो पूजा की जाती है, वह अक्षय फल प्रदान करती है । षष्ठ क्रोश अर्थात् द्वादश दण्ड के समय जो पूजा की जाती है और पूजा करके जो कुछ देवता को अर्पित किया जाय, वह अमृततुल्य बन जाता है । देवता को अमृततुल्य (वस्तु) प्रदान करने पर, जिस प्रकार फल होता है, इस पूजा में भी उसी प्रकार फल प्राप्त होता है ।।40।।

सप्तमक्रोश अर्थात् चतुर्दश दण्ड रात्रि में पूजा करके जो भी द्रव्य प्रदान किया जाता है, वह क्षीरोपम है । देवता को क्षीर प्रदान करने पर जिस प्रकार देवता की तृप्ति होती है, इस पूजा में भी उसी प्रकार तृप्ति हो सकती है । अष्टमक्रोश अर्थात् षोडश दण्ड समय में देवी की पूजा करके जो कुछ अर्पित किया जाता है, वह साधारण द्रव्यतुल्य है – ऐसा जानें । साधारण द्रव्य को प्रदान करने पर जिस प्रकार फल होता है, षोडश दण्ड समय में पूजा करने पर भी उसी प्रकार फल प्राप्त होता है – इसमें संशय नहीं है ।।41।।

रात्रि में षोडश दण्ड के बाद, देवी की पूजा करके, जो समस्त द्रव्य प्रदान किया जाता है, वह विषतुल्य है । देवी को विष प्रदान करने पर जिस प्रकार फल होता है, षोडश दण्ड के बाद पूजा-द्रव्य प्रदान करने पर भी उसी प्रकार फल प्राप्त होता है । हे देवि ! मैं इन सभी विधियों को पशु-भाव के अनुसार बताया हूँ । जो पश्वाचारी हैं, वे इस प्रकार विधियों का अवलम्बन कर, देवी की पूजा करें ।।42।।

दीव्यवीरमते देवि तत्त्वज्ञाने प्रपूजयेत् ।
पञ्चतत्त्वं समानीय यदि पूजापरो भवेत् ॥43॥
कालाकालं महेशानि विचारं तत्र वर्जयेत् ।
अर्द्धरात्रे गते देवि कुलपूजा प्रकीर्त्तिता ॥44॥
अतिस्नेहेन देवेशि तव स्थाने प्रकाशितम् ।
पशोरग्रे प्रकाशं वै कदाचिन्नैव कारयेत् ॥45॥

इति गुप्तसाधनतन्त्रे पार्वतीशिवसंवादे
षष्ठः पटलः ॥6॥

हे देवि ! जो दिव्य वीर-मत में अवस्थित हैं, वे तत्त्वज्ञान के साथ पूजा करें । यदि साधक पञ्चतत्त्व का आनयन कर, पूजा में तत्पर होता है, हे महेश्वरि ! उस समय पूजा में कालाकाल-विचार का परित्याग करें । कौलिकाचार मत में, अर्द्धरात्रि विगत होने पर, जो पूजा की जाती है, वही 'कुलपजा' कही जाती है ।।43-44।।

हे देवेशि ! आपके प्रति मेरा समधिक स्नेह है, इसीलिए इसे प्रकाशित किया हूँ । आप कदापि इसे पशु के निकट प्रचार न करें, सर्वदा गुप्त रखें ।।45।।

गुप्तसाधनतन्त्र में षष्ठ पटल समाप्त ॥6॥

सप्तमः पटलः

श्रीदेव्युवाच —

भूतनाथ जगद्वन्द्य जगन्निस्तारकारक ।
त्वां विना संशयच्छेत्ता न हि त्राता च कुत्रचित् ।।1।।
ब्रूहि मे जगतां नाथ तत्त्वं परमदुर्लभम् ।
येन ज्ञानप्रसादेन निर्वाणपदमीयते ।।2।।
कथ्यतां परमेशान यदि स्नेहोऽस्ति मां प्रति ।
तव स्नेहान्महादेव पण्डिताहं न चान्यथा ।।3।।

श्रीशिव उवाच —

त्रैलोक्ये वातुलः ख्यातो वातुलोऽहं सुरेश्वरि ।
वातुलस्य वचः श्रुत्वा प्रतीता त्वं कथं प्रिये ।।4।।
त्वमेव परमं तत्त्वं किमन्यच्छ्रोतुमिच्छसि ।
अतःपरं महेशानि विरता भव सुन्दरि ।।5।।

पुनः देवी ने जिज्ञासा की — हे भूतनाथ ! आप जगत् के आराध्य हैं एवं जगत् के निस्तारकारक भी हैं । आपको छोड़कर ऐसा कोई नहीं है, जो मन के संशय का छेदन करें एवं आपके बिना कोई त्राणकर्त्ता भी नहीं है ।।1।।

हे जगन्नाथ ! आप मेरे निकट दुर्लभ परम तत्त्व को प्रकट करते हुए कहें ! जिस तत्त्वज्ञान के बल से साधक निर्वाण पद को प्राप्त कर सकता है, उसे मैं जानने की इच्छा करती हूँ ।।2।।

हे परमेश्वर ! यदि मेरे प्रति आपमें स्नेह का सञ्चार होता है, तो परमतत्त्व का निरूपण कर मेरे मानस को पूर्ण करें । मैं आपके स्नेह के कारण ही पाण्डित्यलाभ कर चुकी हूँ । सम्प्रति मुझे तत्त्वज्ञान का उपदेश प्रदान करें; इसकी अन्यथा न करें ।।3।।

देवी के वाक्य का श्रवण कर **शिव ने कहा** — हे सुरेश्वरि ! मैं त्रिजगत् में 'वातुल' के नाम से विख्यात हूँ । अतः मैं जो वातुल हूँ वह ही सत्य है । हे प्रिये ! वातुल के वाक्यों का श्रवण कर आपको सन्तोष नहीं हो पायेगा ।।4।।

हे देवि ! आप वातुल के निकट क्या परम तत्त्व श्रवण करने की इच्छा कर रही हैं ? अतः इस अध्यवसाय से निवृत्त हो जावें ।।5।।

श्रीदेव्युवाच —

यदि तत्त्वं महादेव न मे कथयसि प्रभो।
प्राणत्यागं करिष्यामि पुरतस्ते न संशयः ॥6॥

श्रीशिव उवाच —

सर्वतन्त्रेषु देवेशि कथितञ्च मया पुरा।
व्यक्तरूपेण देवेशि कथं पृच्छ पुनः पुनः ॥7॥
तव स्नेहान्महादेवि किं मया न प्रकाशितम्।
इमां कथां महादेवि व्यक्तरूपे च मा वद ॥8॥

श्रीदेव्युवाच —

तवैव पुरतः स्थित्वा यदुक्तञ्च मया पुरा।
तद्वाक्यं परमेशान कथं मिथ्या भविष्यति ॥9॥

श्रीशिव उवाच —

शृणु देवि प्रवक्ष्यामि तत्त्वं परमदुर्लभम्।
मन्त्रोद्धारक्रमेणैव तत् सर्वं कथयामि ते ॥10॥

महादेव के वाक्यावसान होने पर, **देवी ने पुनः कहा** — हे महादेव ! यदि आप मुझे परम तत्त्वज्ञान का उपदेश नहीं करते हैं, तो, हे प्रभो ! मैं आपके सामने निश्चय ही प्राण त्याग कर दूँगी ।।6।।

तत्त्वज्ञान के विषय में पार्वती के अतिशय आग्रह को जानकर **शिव ने कहा** — हे देवेशि ! मैं इससे पूर्व सभी तन्त्रों में ही तत्त्व-निरूपण कर चुका हूँ । तब आप क्यों पुनः-पुनः व्यक्तरूप में (इस विषय में) जिज्ञासा कर रही हैं ? ।।7।।

हे महादेवि ! मैं आपके प्रति स्नेहवश क्या-क्या प्रकाशित नहीं किया हूँ ? हे महादेवि ! इस कथन को कदापि प्रकाशित करके किसी के भी निकट न बतायें ।।8।।

देवी ने पुनः कहा — हे परमेश्वर ! पूर्व में, मैं आपके अग्र में अवस्थान करती हुई जो कुछ कह चुकी हूँ, वह किस प्रकार मिथ्या हो सकती है ? मैंने तो आपके निकट प्रतिज्ञा की है कि रहस्य-विषय को गुप्त-रूप में रखूँगी । अतः किसी समय भी किसी भी प्रकार से यह प्रकाशित नहीं हो सकता है ।।9।।

इसके अनन्तर शिव ने कहा — हे देवि ! मैं परमदुर्लभ तत्त्वज्ञान के उपदेश को बताऊँगा, श्रवण करें । मन्त्रोद्धार-क्रम से आपको समस्त तत्त्वज्ञान का उपदेश प्रदान करूँगा ।।10।।

भान्तमकारसंयुक्तं थान्तं वायुयुतं कुरु ।
बिन्दुयुक्तं पुनर्भान्तमाकारं बिन्दुसंयुतम् ॥11॥
चन्द्रबीजं समुच्चार्य अंकारं तदनन्तरम् ।
पुनर्भान्तं तकारञ्च चन्द्रवायुयुतं शिरः ॥12॥
पुनर्भान्तं महेशानि पञ्चमस्वरसंयुतम् ।
थान्तं वह्निसमारूढ़माकारसंयुक्तं कुरु ॥13॥
पुनर्भान्तं महेशानि सूर्यस्वरविभूषितम् ।
तान्तमुकारसंयुक्तं धान्तमाकारसंयुतम् ॥14॥
पञ्चतत्त्वमिदं देवि सर्वतन्त्रेषु गोपितम् ।
यदि विप्रो भेवद्देवि पञ्चतत्त्वपरायणः ॥15॥

भान्त अर्थात् मकार में अकार का संयोग करके थान्त अर्थात् दकार में य एवं बिन्दु का योग करने पर, "मद्य" यह शब्द बनता है । पुनः भान्त अर्थात् मकार में आकार एवं बिन्दु का योग कर, बिन्दु-संयुक्त चन्द्रबीज, अर्थात् सकार का उच्चारण करने पर "मांस" यह पद होगा । इसके अनन्तर अकारयुक्त मकार एवं अस्वर तकार का उच्चारण कर, चन्द्रबीज अर्थात् सकार एवं वायुबीज अर्थात् यकार – इन दोनों वर्णों को संयुक्त करके, उसमें बिन्दु का योग करने पर, "मत्स्य" यह शब्द बनता है । बाद में मकार में पञ्चम स्वर अर्थात् उकार का योग कर, थान्त अर्थात् दकार एवं वह्नि अर्थात् र संयुक्त इन वर्णद्वय में आकार का योग करने पर, "मुद्रा" यह शब्द बनता है । पुनः मकार में सूर्यस्वर अर्थात् ऐकार युक्त करके तान्त अर्थात् थकार में उकार का योग करें । बाद में धान्त अर्थात् न – इस वर्ण में शिर अर्थात् अं – इस वर्ण का योग करें । इससे "मैथुनं" यह शब्द बनेगा ।।11-14।।

हे देवि ! उक्त मद्य, मांस, मत्सय, मुद्रा एवं मैथुन – इन्हें पञ्चतत्त्व अथवा 'पञ्चाचार' कहते हैं । यह पञ्चतत्त्व सर्व तन्त्रों में गोपित है । हे देवि, भाग्यवश ही कोई ब्राह्मण पञ्चतत्त्व-परायण हो सकते हैं । साधारण ब्राह्मण पञ्चतत्त्व-परायण नहीं हो सकते ।।15।।

सत्यं सत्यं महेशानि परतत्त्वे प्रलीयते ।
यथा जलं तोयमध्ये लीयते परमेश्वरि ।
तथैव तत्त्वसेवायां लीयते परमात्मनि ।।16।।
क्षत्रियः परमेशानि सहयोगे वसेद् ध्रुवम् ।
वैश्यस्तु लभते देवि स्वरूपो नात्र संशयः ।।17।।
शूद्रस्तु परमेशानि सहलोके सदा वसेत् ।
एतदन्यो महेशानि यदि तत्त्वपरायणः ।।18।।
सत्यं सत्यं महेशानि मुक्तिः फलमखण्डितम् ।
सेनानी परमेशानि देवीदेहे प्रलीयते ।।19।।
शोधनञ्च मया प्रोक्तं नीलतन्त्रादियामले ।
न कस्मैश्चित् प्रवक्तव्यं प्रकाशाच्छिवहा भवेत् ।।20।।

इति गुप्तसाधनतन्त्रे पार्वतीशिवसंवादे
सप्तमः पटलः ।।7।।

पञ्चतत्त्व-परायण साधक ही परमतत्त्व में लीन हो सकते हैं । हे महेशानि ! मेरे इस वाक्य को सत्य-सत्य जानें । हे परमेश्वरि ! जिस प्रकार जल में जल लय प्राप्त हो जाता है, उसी प्रकार पञ्चतत्त्वों की सेवा से परमात्मा में लय प्राप्त हो जाता है ।।16।।

पञ्चतत्त्ववान् क्षत्रिय देवी के सहयोग में वास करता है एवं वैश्य पञ्चतत्त्वपरायण होने पर (उन्हें) देवी के सारूप्य की प्राप्ति होती है । इसमें संशय नहीं है ।।17।।

हे परमेश्वरि ! यदि शूद्रव्यक्ति पञ्चतत्त्वपरायण होता है, तो वह शूद्र देवी के साथ देवीलोक में वास करता है । हे महेशानि ! इससे भिन्न अन्य कोई व्यक्ति पञ्चतत्त्वपरायण होने पर उसे मुक्ति-फल की प्राप्ति होती है । मेरे इस वाक्य को सत्य, सत्य जानें । कदापि इसकी अन्यथा नहीं होती है । हे देवि ! सेनानी-पुरुष पञ्चतत्त्वपरायण होने पर, देवी के देह में लीन हो जाते हैं ।।18-19।।

हे देवि ! मैं नीलतन्त्र प्रभृति एवं यामलादि में पञ्चतत्त्वशोधन के विषय में बताया हूँ । इस समय आपके निकट भी उस पञ्चतत्त्व को बताया हूँ । इसे किसी के निकट प्रकाशित करके न बतायें । इस पञ्चतत्त्व का प्रकाशन करने पर शिवहनन-जनित पाप होता है ।।20।।

गुप्तसाधनतन्त्र में सप्तम पटल समाप्त ।।7।।

अष्टमः पटलः

श्रीशिव उवाच —

अतः परं प्रवक्ष्यामि सिद्धारिचक्रमुत्तमम् ।
अस्य विज्ञानमात्रेण मन्त्रसिद्धिर्भवेद् ध्रुवम् ।
यद्विना परमेशानि मन्त्रसिद्धिर्भवेन्न हि ।।1।।
चतुरस्रं लिखेत् कोष्ठं यावत् षोडशकोष्ठकम् ।
तावदङ्कान् प्रयत्नेन रचयेत् साधकोत्तमः ।।2।।
तत्र वर्णान् लिखेन्मन्त्री प्रकारं शृणु सादरम् ।
इन्द्वग्निरुद्रनवनेत्रयुगार्कदिक्षु ऋत्त्वष्टषोडशचतुर्दशभौतिकेषु ।
पातालपञ्चदशवह्नि-हिमांशुकोष्ठे वर्णान् लिखेल्लिपि
भवान् क्रमशस्तु धीमान् ।।3।।
सिद्धः सिध्यति कालेन साध्यस्तु जपहोमतः ।
सुसिद्धो ग्रहणाद्देवि रिपुर्मूलं निकृन्तति ।।4।।

शिव ने कहा — इसके बाद सर्वतन्त्रोक्त सिद्धारिचक्र को बताऊँगा । इस चक्र के विज्ञान-मात्र से ही मन्त्रसिद्धि हो जाते हैं । इस चक्रविज्ञान के बिना मन्त्रसिद्धि नहीं हो सकता ।।1।।

प्रथमतः, चतुरस्र का अङ्कन कर, उसके मध्य में जिससे षोडश कोष्ठ बन सके, इस प्रकार बना कर, साधक यत्नपूर्वक रेखापात करके षोडश कोष्ठान्वित एक चक्र का अङ्कन करें ।।2।।

इन कोष्ठों में, जिस प्रक्रिया से वर्णपात करना है, उसे बता रहा हूँ, आदरपूर्वक उसका श्रवण करें । प्रथम गृह में 'अ', तृतीय गृह में 'आ', एकादश में 'इ', नवम में 'ई', द्वितीय में 'उ', चतुर्थ में 'ऊ', द्वादश में 'ऋ', दशम में 'ॠ', षष्ठ में 'ऌ', अष्टम में 'ॡ', षोडश में 'ए', चतुर्दश में 'ऐ', पञ्चम में 'ओ', सप्तम में 'औ', पञ्चदश में 'अं', त्रयोदश गृह में 'अः' – इस प्रकार षोडश कोष्ठों में षोडश स्वरवर्णों का विन्यास कर इस नियम से उक्त षोडश कोष्ठों में ककारादि से 'ह' पर्यन्त समस्त व्यञ्जनवर्णों का विन्यास करना चाहिए ।।3-4।।

इत्यादिकं फलं देवि पूर्वाम्नाये मयोदितम् ।
नामानुरूपमेतेषां शुभाशुभफलं त्वभेत् ॥5॥
शृणु देवि प्रवक्ष्यामि गणनाक्रममुत्तमम् ।
नामाद्यक्षरतो देवि यावन्मन्त्रादिमाक्षरम् ॥6॥
कादिडान्तं खादिढान्तं गादिणान्तं घतान्विते ।
ङादिथान्तं चादिदान्तं छादिधान्तं जनान्तिके ॥7॥
झादिपान्तं ञादिफान्तं टादिवान्तं ठभान्तिके ।
डादिमान्तं ढादियान्तं णादिरानतं तलान्तिके ॥8॥
वर्णत्रयं महेशानि कोष्ठे पञ्चदशे प्रिये ।
आदिकोष्ठे चतुर्वर्णान् विलिखेत् साधकोत्तमः ॥9॥

उक्त प्रकार के चक्र अंकित कर, सिद्ध, साध्य, सुसिद्ध एवं अरि – इस प्रकार गणना करें । सिद्धमन्त्र को ग्रहण करने पर, वह कालान्तर में सिद्ध हो जाता है । साध्य मन्त्र को ग्रहण करके जप-होमादि करने पर, वह मन्त्र सिद्ध होता है । सुसिद्ध मन्त्र के ग्रहण-मात्र से वह सिद्ध हो जाता है । रिपुमन्त्र को ग्रहण करने पर, साधक का समूल विनाश हो जाता है । हे देवि ! उक्त प्रकार से सिद्धारि-चक्र के फल को पूर्व आम्नाय में सविशेष-रूप से निरूपित कर चुका हूँ । विशेषतः साध्य, सिध्य, सुसिद्ध एवं अरि – इन समस्त नामों के अनुसार शुभाशुभ फलों का निरूपण करें ।।5-6।।

हे देवि ! इस समय उक्त चक्र के द्वारा जिस प्रकार गणना करना है, उसे बता रहा हूँ, श्रवण करें । साधक मन्त्रग्रहीता के नाम के आद्यक्षर से मन्त्र के आद्यक्षर पर्यन्त साध्य, सिद्ध, सुसिद्ध, अरि – इस प्रकार गणना करें ।।7।।

क से ड पर्यन्त, ख से ढ पर्यन्त, ग से ण पर्यन्त, घ से त पर्यन्त, ङ से थ पर्यन्त, च से द पर्यन्त, छ से ध पर्यन्त, ज से न पर्यन्त, झ से प पर्यन्त, ञ से फ पर्यन्त, ट से व पर्यन्त, ठ से भ पर्यन्त, ड से म पर्यन्त, ढ से य पर्यन्त, ण से र पर्यन्त एवं त से ल पर्यन्त सिद्धादि की गणना करें ।।8।।

पूर्वोक्त प्रकार से वर्ण-विन्यास करने पर, पञ्चदश कोष्ठ के प्रति गृह में तीन-तीन वर्ण विन्यास होगा, केवल प्रथम कोष्ठ में चार वर्ण रहेगा ।।9।।

वर्णाष्टकं गृहीत्वा तु कथितं तव सुव्रते।
कोष्ठस्थितान् समादाय गणनामाचरेत् सुधीः।
नामाद्यक्षर संयुक्तं सिद्धकोष्ठं प्रकीर्तितम् ॥10॥
अथातः संप्रवक्ष्यामि पूजाकारन्तु सिद्धिदम्।
यं विना परमेशानि न हि सिद्धिः प्रजायते ॥11॥
शालग्रामे मणौ यन्त्रे प्रतिमायां सुरेश्वरि।
पुस्तिकायाञ्च गङ्गायां सामान्ये च जले तथा ॥12॥
अथवा पुष्पयन्त्रे च पूजयेच्छिवलिङ्गके।
यन्त्रभेदेन देवेशि फलं सम्यक् प्रजायते ॥13॥
शालग्रामे शतगुणं मणौ तद्वत् फलं लभेत्।
यन्त्रे लक्षगुणं प्रोक्तं प्रतिमायां तथैव च ॥14॥
पुस्तिकायाञ्च गङ्गायां समानफलमीरितम्।
सामान्ये च जले देवि पूजादि-दोषशान्तये ॥15॥

हे प्रिये ! साधक उक्त प्रकार से चक्र अंकित कर, उसमें वर्ण-विन्यास करें। सुधी साधक कोष्ठगत समस्त वर्णों का ग्रहण कर गणना करें। जिस कोष्ठ में नाम का आद्यक्षर दृष्ट होवें, उसे सिद्ध कोष्ठ जानें ।।10।।

हे परमेश्वरि ! इसके बाद पूजा के प्रकार (प्रक्रिया) को बता रहा हूँ, श्रवण करें। यह पूजा ही साधक को सिद्धि प्रदान करती है। पूजा के बिना किसी भी प्रकार से सिद्धिलाभ नहीं किया जा सकता है ।।11।।

शालग्राम में, शिला में, मणि में, यन्त्र में, प्रतिमा में, पुस्तक में, गङ्गा में, सामान्य जल में, पुष्पयन्त्र में अथवा शिवलिङ्ग में साधक देवी की पूजा करें। हे देवेशि ! यन्त्रविशेष में पूजा करने पर फलों में तारतम्य होता है ।।12-13।।

शालग्राम शिला में देवी की पूजा करने पर उस पूजा से शत गुण फल-लाभ होता है। मणि में पूजा करने पर भी उक्त-रूप फल-लाभ होता है। यन्त्र में एवं प्रतिमा में पूजा करने पर लाख गुना अधिक फल को कहा गया है ।।14।।

पुस्तक में एवं गङ्गा में देवी की अर्चना किये जाने पर समान ही फल-लाभ होता है। सामान्य रूप जल में पूजा करने पर केवल पूजा-दोष की शान्ति-मात्र का लाभ होता है अर्थात् दीक्षित व्यक्ति प्रतिदिन इष्ट-देवता की पूजा करने पर, जो दोष होता है, सामान्य जल से पूजा करने पर, उस दोष की ही निवृत्ति होती है; अन्य कोई विशेष फल-लाभ नहीं होता है ।।15।।

पुष्पयन्त्रे महेशानि पूजनात् सर्वसिद्धिभाक् ।
शिवलिङ्गे महेशानि अनन्तफलमीरितम् ॥16॥
न कुर्यात् पार्थिवे लिङ्गे देवीपूजादिकाः क्रियाः ।
पार्थिवे पूजनाद्देवि सिद्धिहानिः प्रजायते ॥17॥
यदि दैवान्महेशानि मृत्तिकास्खलनं भवेत् ।
तावद्वर्षसहस्राणि नरके पूर्णशोभिते ॥18॥
कुम्भीपाके महाघोरे पच्यते पितृभिः सह ।
अतएव महेशानि पार्थिवे न हि पूजयेत् ॥19॥
स्फाटिकादीन् समानीय लिङ्गं निर्माय यत्नतः ।
तल्लिङ्गे पूजनाद्देवि सर्वसिद्धियुतो भवेत् ॥20॥

इति गुप्तसाधनतन्त्रे पार्वतीशिवसंवादे
अष्टमः पटलः ॥8॥

हे महेशानि ! पुष्पयन्त्र में पूजा करने पर, साधक सर्वप्रकार की सिद्धियों का भागी बनता है । शिवलिङ्ग में पूजा करने पर, अनन्त फल होता है ।।16।।

हे प्रिये ! कदापि पार्थिव लिङ्ग में देवी की पूजादि क्रियाओं को न करें । हे देवि ! पार्थिवलिङ्ग में पूजा करने पर सिद्धि-हानि होती है ।।17।।

हे महेशानि ! पार्थिवलिङ्ग में पूजा के समय यदि दैववश उस लिङ्ग से मृत्तिका स्खलित होती है, तो उस स्खलित मृत्तिका-गत परमाणु के सम-संख्यक वर्ष पर्यन्त पूजक नरक में वास करता है ।।18।।

चूँकि पार्थिव लिङ्ग में पूजा करते समय मृत्तिका का स्खलन होने पर पूजक पितृगणों के साथ महाघोर कुम्भीपाक नरक में पतित होता है । हे महेशानि ! इसीलिए पार्थिक लिङ्ग में कदापि पूजा न करें ।।19।।

हे देवि ! साधक स्फटिकादि मणि को लाकर यत्न के साथ, लिङ्ग-निर्माण पूर्वक उस लिङ्ग में पूजा करें । वैसा करने पर, वह साधक सर्वसिद्धियों से समन्वित बन सकता है ।।20।।

गुप्तसाधनतन्त्र में अष्टम पटल समाप्त ॥8॥

नवमः पटलः

श्रीशिव उवाच —

अथातः संप्रवक्ष्यामि धनदां सर्वसिद्धिदाम् ।
यामाराध्य महादेवि कुबेरो धननायकः ॥1॥
यत्प्रसादान्महेशानि रमेच्च त्रिदशोश्वरः ।
तां विद्यां परमेशानि शृणुष्व वरवर्णिनि ॥2॥
दान्तं बिन्दुसमारूढं महामायां हरिप्रियाम् ।
रतिप्रिये ततः पश्चात् वह्निजायां ततः प्रिये ।
नवाक्षरो महामन्त्रो द्रुतं सिद्धिप्रदायकः ॥3॥
अनया सदृशी विद्या अनेन सदृशो जपः ।
अनया सदृशी सिद्धिर्मम ज्ञाने न वर्त्तते ॥4॥
शतवक्त्रो यदि भवेत् तावद्वक्तुं न शक्यते ।
पञ्चवक्त्रेण देवेशि कथ्यते किं मयाऽधुना ॥5॥

शिव ने कहा — हे महादेवि ! इसके बाद धनदा देवी के मन्त्र, पूजादि को बता रहा हूँ । यह धना देवी साधक को सर्वप्रकार की सिद्धियों को प्रदान करती हैं । इन धनदा की आराधना करके कुबेर धनाधिपति बन गये हैं ॥1॥

जिनके प्रसाद को लाभ कर, त्रिदशेश्वर ने अतुल सम्पत्ति का लाभ किया है, हे सुन्दरि ! वही विद्या आपके निकट बता रहा हूँ, श्रवण करें ॥2॥

हे प्रिये ! 'धं ह्रीं श्रीं रतिप्रिये स्वाहा' – यह नवाक्षर मन्त्र कहा गया है । यह मन्त्र साधक को शीघ्र सिद्धि प्रदान करता है ॥3॥

हे देवि ! इस विद्या के सदृश विद्या, इस मन्त्र-जप के सदृश जप, उक्त मन्त्र की सिद्धि के सदृश सिद्धि, मैं नहीं जानता हूँ ॥4॥

यदि कोई शतवक्त्र होकर इस विद्या के माहात्म्य के वर्णन में प्रवृत्त होते हैं, तो भी वह इसके समग्र माहात्म्य का वर्णन नहीं कर सकते हैं । हे देवेशि ! मैं पञ्चवक्त्र (होकर इसके) द्वारा इसके माहात्म्य का क्या वर्णन करूँ ? ॥5॥

कुबेरोऽस्य ऋषिः प्रोक्तः पंक्तिश्छन्द उदाहृतम्।
देवता धनदा देवी सर्वसिद्धिप्रदायिनी ॥6॥
धर्मार्थकाममोक्षाश्च चतुर्वर्गफलप्रदा।
षड्दीर्घमायया चैव षडङ्गन्याससमाचरेत् ॥7॥
ध्यानमस्याः प्रवक्ष्यामि येन सिद्धो भवेन्नरः।
देवीं काञ्चनकान्तिविमलां रक्तांशुकाच्छादिताम्।
हेमाम्भोजयुगाभयाङ्कुशकरीं रत्नोल्लसत्कुण्डलाम्।
सर्वाभीष्टफलप्रदां त्रिनयनां नागेन्द्रहोरोज्ज्वलाम्।
वन्दे सर्वभयापहां त्रिजगतां पापापहारीं पराम् ॥8॥
स्वकीयात्मस्वरूपान्तां भावयेत् चित्स्वरूपिणीम्।
एवं ध्यात्वा महेशानि मानसैः पूजनञ्चरेत् ॥9॥
अर्घपात्रं स्थापयित्वा धेनुयोनिं प्रदर्शयेत्।
पीठपूजां ततः कृत्वा ततः पीठमनुं जपेत् ॥10॥

इस मन्त्र के ऋषि हैं कुबेर, छन्द हैं पङ्क्ति एवं देवता 'धनदादेवी' कही गयी हैं। ये धनदा साधक को सर्वसिद्धि प्रदान करती हैं ।।6।।

धनदादेवी साधक को धर्म, अर्थ, काम, मोक्ष – इन चतुर्वर्गों को प्रदान करती हैं। ह्रां हृदयाय नमः, ह्रीं शिरसे स्वाहा, ह्रूं शिखायै वषट्, ह्रैं कवचाय हुं, ह्रौं नेत्रत्रयाय वौषट्, ह्रः अस्त्राय फट्। इस प्रकार देवी का षडङ्गन्यास करना चाहिए ।।7।।

इसके अनन्तर धनदादेवी के ध्यान को बता रहा हूँ, श्रवण करें। इस ध्यान के अनुसार देवी के स्वरूप का चिन्तन करने पर, साधक सर्वसिद्धियों से समन्वित हो सकते हैं। धनदा-देवी की विमल देहकान्ति विशुद्ध काञ्चन के समान है; ये रक्तवस्त्र का परिधान करतीं हैं। इनके हस्तचतुष्टय में स्वर्णपद्मयुगल, अभय मुद्रा एवं अङ्कुश विद्यमान है। ये रत्नखचित कुण्डल के द्वारा शोभित हो रहीं हैं। ये सर्वदा साधक को सर्वप्रकार अभीष्ट फल को प्रदान करतीं हैं। धनदादेवी सभी के भय का एवं त्रिजगत् के पापों का हरण करतीं हैं। अतः उन परदेवता को नमस्कार करता हूँ ।।8।।

इन चित् स्वरूपिणी देवता की भावना आत्मस्वरूप में करें। हे महेशानि ! साधक उक्तरूप में देवी का ध्यान कर, मानसोपचार से पूजा करें ।।9।।

इसके अनन्तर अर्घ्यपात्र का स्थापन कर, धेनु एवं योनि-मुद्रा का प्रदर्शन करना चाहिए। उसके बाद, पीठ-देवता की पूजा कर, पीठ-मन्त्र का जप करें ।।10।।

आधारशक्तिमारभ्य यजेत् पद्मासनं प्रिये ।
प्रणवादि-नमोऽन्तेन पूजयेत् साधकाग्रणीः ॥11॥
पुनर्ध्यात्वा महेशानि मूलेनावहनञ्चरेत् ।
षडङ्गेन च संपूज्य जीवन्यासं समाचरेत् ॥12॥
मूलमन्त्रं समुच्चार्य ततो द्रव्यं समुच्चरेत् ।
देवतायै ततः पश्चात् योगात्मकमनुं स्मरेत् ॥13॥
पाद्याद्यैः पूजयेद्देवीं यथाविभवविस्तरैः ।
यन्त्रमस्याः प्रवक्ष्यामि तज्ज्ञात्वामृतमश्नुते ॥14॥
नवयोन्यात्मकं चक्रं विलिखेत् कर्णिकोपरि ।
दिग्दलं पद्ममालिख्य चतुरस्रं ततो बहिः ॥15॥
कोणेषु वज्रं संलिख्य मध्ये बीजं समुल्लिखेत् ।
इदं यन्त्रं महेशानि साक्षाद्देवीस्वरूपकम् ॥16॥

हे प्रिये ! आधारशक्ति से पद्मासन पर्यन्त पीठ-देवतागणों के नाम के आदि में प्रणव (ॐ) एवं अन्त में 'नमः' शब्द का योग कर, पूजा करना चाहिए ।।11।।

इसके अनन्तर पुनः ध्यान कर, मूलमन्त्र से आवाहन-पूर्वक 'ह्रां हृदयाय नमः' – इत्यादि क्रम से षडङ्ग-पूजा के समापन के अन्त में जीवन्यास करें ।।12।।

पहले मूलमन्त्र का उच्चारण कर, देय द्रव्य के नाम का उल्लेख करें । बाद में चतुर्थ्यन्त देवता के नाम का उच्चारण कर, पूजा के समस्त द्रव्यों का निवेदन करना चाहिए ।।13।।

उक्त प्रकार से अपने विभव के अनुसार, पाद्यादि उपहारों के द्वारा देवी की अर्चना करें । इसके अनन्तर, धनदादेवी की पूजा के यन्त्र को बता रहा हूँ । इस यन्त्र को सम्यक्-रूप से अवगत होने पर, साधक मुक्ति-लाभ कर सकता है ।।14।।

कर्णिका के मध्य में नवयोनिमय चक्र को लिखना चाहिए । उसके बाद दश-दल-पद्म को अङ्कित कर, उसके बाह्य में चतुरस्र को अङ्कित करें । इस चतुरस्र के कोण में वज्र को अङ्कित कर, कर्णिका के मध्य में 'धं' इस बीज को लिखना चाहिए । हे महेशानि ! यह मन्त्र साक्षात् देवीस्वरूप है ।।15-16।।

लक्ष्मीं पद्मां पद्मालयां श्रियञ्चैव हरिप्रियाम् ।
शवाञ्च कमलाञ्चैव अब्जाञ्च चञ्चलान्तथा ॥17॥
लोलाञ्च प्रणवाद्येता नमोऽन्तेन प्रपूजयेत् ।
पुनर्मध्ये ततो देवीं पूजयेत् साधकोत्तमः ॥18॥
प्राणायामं ततः कृत्वा यथाशक्ति जपञ्चरेत् ।
गुह्यादिकं जपफलं देव्या हस्ते समर्पयेत् ॥19॥
प्राणायामं ततः कृत्वा प्रणामाष्टाङ्गमाचरेत् ।
अथोत्थय महेशानि विशेषार्घ्यं निवेदयेत् ॥20॥
आत्मसमर्पणं कृत्वा विहरेच्च यथेच्छया ।
किञ्चिन्नैवेद्यं स्वीकृत्य निर्माल्यं धारयेत्ततः ॥21॥
लक्षमेकं जपेन्मन्त्रं दशांशं होममाचरेत् ।
तद्दशांशं तर्पणञ्च अभिषेकं दशांशकम् ॥22॥
ततः कुर्यान्महेशानि दशांशं विप्रभोजनम् ।
एवं कृत्वा महेशानि साक्षात् सुरगुरुः प्रभुः ॥23॥

इसके अनन्तर लक्ष्मी, पद्मालया, श्री, हरिप्रिया, शवा, कमला, अब्जा, चञ्चला, लोला – इन सभी देवताओं के चतुर्थ्यन्त नाम के आदि में प्रणव एवं अन्त में 'नमः' शब्द का योग करके पूजा करना चाहिए । पुनः साधक यन्त्र के मध्य में देवी की पूजा करें ।।17-18।।

उसके बाद प्राणायाम कर, यथाशक्ति मूलमन्त्र का जप करें एवं 'गुह्यातिगुह्य गोप्तृत्वं' – इत्यादि मन्त्र से देवि के हस्त में जल समर्पण करना चाहिए ।।19।।

इसके अनन्तर पुनः प्राणायाम करके अष्टाङ्ग प्रणाम करें । बाद में गात्रोत्थान पूर्वक विशेषार्घ्य को निवेदित करें ।।20।।

इसके अनन्तर साधक देवी के पास आत्म-समर्पण कर, यथेष्ट विहार करें । उसके बाद कुछ नैवेद्य को ग्रहण कर, निर्माल्य को धारण करें ।।21।।

इन देवता को पूर्वोक्त मन्त्र का एक लाख जप, जप का दशांश होम, होम का दशांश तर्पण करें एवं तर्पण का दशांश ब्राह्मण-भोजन कराना चाहिए । हे महेश्वरि ! साधक उक्तरूप से धनदा की आराधना करने पर, साक्षात् सुरगुरु-स्वरूप बन सकता है ।।22-23।।

तस्य हस्ते महेशानि सर्वसिद्धिर्न संशयः ।
नित्यं नित्यं महेशानि ईश्वरो यच्छते धनम् ॥24॥

लक्ष्मीः सरस्वती चैव निवसेन्मन्दिरे सुखे ।
इहलोके महेशानि महेन्द्रो जायते क्षितौ ॥25॥

मोक्षाकाङ्क्षी महेशानि महामोक्षमवाप्नुयात् ।
भोगार्थी लभते भोगं यथेच्छं वर्त्ततेऽचिरात् ॥26॥

इहलोके सुखं भुक्त्वा मृतो गच्छेत्धरेः पद्म ।
मृतो राजकुले भूयो जन्म चाप्नोति साधकः ॥27॥
अथातः संप्रवक्ष्यामि धनदा स्तोत्रमुत्तमम् ।
यद्गुप्तं सर्वतन्त्रेषु इदानीं तत् प्रकाशितम् ॥28॥

नमः सर्वस्वरूपे च नमः कल्याणदायिके ।
महासम्पत् प्रदे देवि धनदायै नमोऽस्तु ते ॥29॥

हे महेशानि ! जो साधक इस प्रणाली का अवलम्बन कर, धनदादेवी की आराधना करते हैं, उनके हस्त में सर्व प्रकार की सिद्धियाँ विद्यमान रहती हैं । इसमें कोई सन्देह नहीं है । हे महेश्वरि ! उक्तरूप से साधना करने पर, प्रतिदिन ईश्वर उसे धन-प्रदान करते रहते हैं एवं सर्वदा उसके गृह में लक्ष्मी एवं सरस्वती सुखपूर्वक वास करती हैं और उक्त-रूप साधक पृथिवी पर महेन्द्र बन कर जन्म ग्रहण करता है ॥24-25॥

हे महेशानि ! मोक्षाकाङ्क्षी बनकर, उक्तरूप साधन करने पर (साधक) मोक्षलाभ कर सकता है एवं भोगार्थी व्यक्ति चिरकाल पर्यन्त यथेच्छ भोग कर सकता है । विशेषतः साधक इस आराधना के द्वारा इहलोक में सुख-भोग कर, मरण के बाद हरि-पद को प्राप्त करता है एवं पुनः राजकुल में जन्मग्रहण करता है ॥26-27॥

इसक अनन्तर धनदादेवी के स्तोत्र को बता रहा हूँ । यह स्तोत्र सर्वतन्त्रों में ही गुप्त है । इस समय उसे प्रकाशित कर रहा हूँ ॥28॥

हे देवि ! आप जगन्मयी हैं । आप साधक को सर्वाङ्गीण मङ्गल एवं महासम्पत् प्रदान करती हैं । देवि धनदे ! आपको मैं नमस्कार करता हूँ ॥29॥

महाभोगप्रदे देवि महाकामप्रपूरिते ।
सुखमोक्षप्रदे देवि धनदायै नमोऽस्तु ते ।।30।।
ब्रह्मरूपे सदानन्दे सदानन्दस्वरूपिणि ।
द्रुतसिद्धिप्रदे देवि धनदायै नमोऽस्तु ते ।।31।।
उद्यत्सूर्यप्रकाशाभे उद्यदादित्यमण्डले ।
शिवतत्त्वप्रदे देवि धनदायै नमोऽस्तु ते ।।32।।
विष्णुरूपे विश्वमते विश्वपालनकारिणि ।
महासत्त्वगुणाक्रान्ते धनदायै नमोऽस्तु ते ।।33।।
शिवरूपे शिवानन्दे कारणानन्दविग्रहे ।
विश्वसंहाररूपे च धनदायै नमोऽस्तु ते ।।34।।
पञ्चतत्त्वस्वरूपे च पञ्चाचार सदारते ।
साधकाभीष्टदे देवि धनदायै नमोऽस्तु ते ।।35।।

हे देवि ! आप साधक को महाभोग प्रदान कर, उसके सर्वप्रकार कामनाओं का पूरण करती हैं । आप सुख एवं मोक्ष प्रदान करती हैं । हे देवि ! धनदे ! आपको मैं नमस्कार करता हूँ ।।30।।

हे देवि ! आप ब्रह्मस्वरूपा, आनन्दमयी, नित्यानन्दस्वरूपिणी हैं एवं साधक को शीघ्र सिद्धि प्रदान करती हैं । हे देवि ! धनदे ! आपको नमस्कार करता हूँ ।।31।।

हे देवि ! उदयशील आदित्य के समान आपकी देहकान्ति प्रकाशित होती है, आप आदित्य-मण्डल में वास करती हैं एवं आपने शिव को तत्त्वज्ञान प्रदान किया है । हे देवि धनदे ! आपको नमस्कार करता हूँ ।।32।।

हे देवि ! आप विष्णुस्वरूपा हैं, आप इस अनन्त ब्रह्माण्ड की अभीष्ट देवता हैं, आप ही अनन्त जगत् का पालन कर रही हैं एवं सत्त्वगुण आपको ही आश्रय करके विद्यमान हैं । हे देवि धनदे ! आपको नमस्कार करता हूँ ।।33।।

हे देवि ! आप शिवस्वरूपा हैं, आप आनन्दप्रदायिनि हैं, आपका शरीर कारणानन्दमय है एवं आप ही अनन्त जगत् का संहार करती हैं । हे देवि धनदे ! आपको नमस्कार करता हूँ ।।34।।

हे देवि ! आप पञ्चतत्त्वस्वरूपा हैं एवं सर्वदा पञ्चाचार में निरता हैं एवं आप ही साधकों को अभीष्ट वर प्रदान करती हैं । हे देवि धनदे ! आपको नमस्कार करता हूँ ।।35।।

इदं स्तोत्रं मया प्रोक्तं साधकाभीष्टदायकम् ।
यः पठेत् पाठयेद्वापि स लभेत् सकलं फलम् ॥36॥
त्रिसन्ध्यं यः पठेन्नित्यं स्तोत्रमेतत् समाहितः ।
सः सिद्धिं लभते शीघ्रं नात्र कार्या विचारणा ॥37॥
इदं रहस्यं परमं स्तोत्रं परमदुर्लभम् ।
गोपनीयं प्रयत्नेन स्वयोनिरिव पार्वति ॥38॥
अप्रकाश्यमिदं देवि गोपनीयं परात्परम् ।
प्रपठन्नात्र सनदेहो धनवान् जायतेऽचिरात् ॥39॥

॥ इति धनदास्तोत्रम् ॥

श्रीदेव्युवाच –

धनदा या महाविद्या कथिता न प्रकाशिता ।
इदानीं श्रोतुमिच्छामि कवचं पूर्वसूचितम् ॥40॥

श्रीशिव उवाच –

शृणु देवि प्रवक्ष्यामि कवचं मन्त्रविग्रहम् ।
सारात् सारतरं देवि कवचं मन्मुखोदित्तम् ॥41॥

हे देवि ! साधक को अभीष्ट-प्रदायक इस स्तोत्र को मैंने प्रकाश किया है । जो प्रतिदिन त्रिसन्ध्या में समाहित-चित्त से इस स्तोत्र का पाठ करते हैं, वे सर्व कार्यों में शीघ्र सिद्धिलाभ कर सकते हैं । इसकी कदापि अन्यथा नहीं होती है ।।36-37।।

यह स्तोत्र अति रहस्यपूर्ण एवं परम दुर्लभ है । हे पार्वति ! इस स्तोत्र को स्वीय योनि के समान सर्वदा यत्न-पूर्वक गोपन करके रखें । इसे कदापि प्रकाशित न करें । हे देवि ! इस परम गोपनीय परात्पर परब्रह्म-स्वरूप स्तोत्र का पाठ करने पर, अचिरकाल में ही महाधन-सम्पन्न बन सकते हैं । इसमें कोई संशय नहीं है ।।38-39।।

देवि ने पुनः जिज्ञासा की – हे नाथ ! ये जो महाविद्या धनदा देवि कही गयीं, ये इससे पूर्व प्रकाशिता नहीं हुई थी । इस समय धनदा देवी के कवच को जो आपके द्वारा पूर्वसूचित है, उसे सुनने की इच्छा करती हूँ ।।40।।

शिव ने कहा – हे देवि ! मैं मन्त्रमय कवच को बता रहा हूँ, श्रवण करें । हे देवि ! यह कवच सभी की अपेक्षा सारतर है । इससे पूर्व यह कवच मेरे मुख से प्रकाशित हुआ है ।।41।।

धनदा कवचस्यास्य कुबेर ऋषिरीरितः ।
पंक्तिश्छन्दो देवता च धनदा सिद्धिदा सदा ।
धर्मार्थकाम मोक्षेषु विनियोगः प्रकीर्त्तितः ॥42॥

धं बीजं मे शिरः पातु ह्रीं बीजं मे ललाटकम् ।
श्रीं बीजं मे मुखं पातु रकारं हृदि मेऽवतु ॥43॥

तिकारं पातु जठरं प्रिकारं पृष्टतोऽवतु ।
येकारं जङ्घयोर्युग्मे स्वाकारां पादमूलके ॥44॥

शीर्षादिपादपर्यन्तं हाकारं सर्वतोऽवतु ।
इत्येतत् कथितं कान्ते कवचं सर्वसिद्धिदम् ॥45॥

गुरुमभ्यर्च्य विधिवत् कवचं प्रपठेद् यदि ।
शतवर्षसहस्राणां पूजायाः फलमाप्नुयात् ॥46॥

इस धनदा कवच के ऋषि कुबेर कहे गये हैं । इसका छन्द पङ्क्ति है एवं देवता धनदा हैं । ये सर्वदा साधक को सिद्धि प्रदान करती हैं । धर्मार्थ-काम एवं मोक्ष के लिए इसका विनियोग होता है अर्थात् धर्म, अर्थ, काम एवं मोक्ष – इन चतुर्वर्ग का साधन ही इस कवच के पाठ का फल है ।।42।।

'धं' यह बीज मेरे मस्तक की रक्षा करें, 'ह्रीं' यह बीज मेरे ललाट की, 'श्रीं' यह बीज मेरे मुख की, 'र' यह वर्ण मेरे हृदय की, 'ति' यह वर्ण मेरे उदर की, 'प्रि' यह वर्ण मेरे पृष्ठ की, 'ये' यह वर्ण मेरे जङ्घायुग्म की, 'स्वा' यह वर्ण मेरे पादमूल की एवं 'हा' यह वर्ण शीर्षादि पाद पर्यन्त मरे सर्वशरीर की रक्षा करें । हे प्रिये ! आपके निकट इस कवच को बताया हूँ । यह सर्वसिद्धिप्रद है । कवच अर्थात् वर्म को धारण करने पर जिस प्रकार शरीर में अस्त्रादि बिद्ध नहीं हो सकता है, उसी प्रकार इस कवच का पाठ करने पर भी साधक का समस्त शरीर सुरक्षित हो जाता है । इसीलिए उक्तरूप स्तोत्र को 'कवच' कहा जा सकता है ।।43-45।।

हे देवि ! यदि कोई साधक विधिपूर्वक गुरुदेव की अर्चना करके इस कवच का पाठ करते हैं, तो वह साधक, शतसहस्र वर्षों तक पूजा करने पर जितना फल होता है, उससे भी अधिक फल-लाभ कर सकते हैं ।।46।।

गुरुपूजां विना देवि न हि सिद्धिः प्रजायते ।
गुरुपूजापरो भूत्वा कवचं प्रपठेत्ततः ॥47॥
सर्वसिद्धियुतो भूत्वा विचरेत् भैरवो यथा ।
प्रातःकालै पठेद् यस्तु मन्त्रजापपुरः सरम् ॥48॥
सोऽभीष्टफलमाप्नोति सत्यं सत्यं न संशयः ।
पूजाकाले पठेद् यस्तु देवीं ध्यात्वा हृदम्बुजे ॥49॥
षण्मासाभ्यन्तरे सिद्धिर्नात्र कार्या विचारणा ।
सांयकाले पठेद् यस्तु स शिवो नात्र संशयः ॥50॥
भूर्जे विलिख्य गुलिकां स्वर्णस्थां धारयेद् यदि ।
पुरुषो दक्षिणे बाहौ योषिद्वामभुजे तथा ।
सर्वसिद्धियुतो भूत्वा धनवान् पुत्रवान् भवेत् ॥51॥
इदं कवचमज्ञात्वा यो भजेद्धनदां शुभे ।
स शस्त्रघातमाप्नोति सोऽचिरान्मृत्युमाप्नुयात् ॥52॥

हे देवि ! गुरु-पूजा के बिना कदापि सिद्धि प्राप्त नहीं हो सकती है । अतः पहले गुरुदेव की अर्चना कर, उसके पश्चात् कवच का पाठ करें ।।47।।

इस कवच का पाठ करने पर साधक सर्वसिद्धि-सम्पन्न होकर भैरव के समान सर्वत्र विचरण कर सकता है । जो साधक प्रातःकाल मन्त्र का जप कर, इस कवच का पाठ करते हैं, वह अपने अभीष्ट फल-लाभ करते हैं । हे देवि ! मेरे इस कवच को सत्य-सत्य जानें । इसमें किसी प्रकार संशय न करें । हे प्रिये ! जो व्यक्ति पूजा के समय धनदा देवी का अपने हृदय-कमल में ध्यान कर, इस कवच का पाठ करते हैं, वह व्यक्ति छः महीने में सिद्धि लाभ कर सकते हैं । जो सायंकाल में इस कवच का पाठ करते हैं, वह स्वयं शिवस्वरूप बन जाते हैं । इसमें कोई संशय नहीं है ।।48-50।।

हे देवि ! यदि भूर्जपत्र पर इस कवच को लिखकर, स्वर्ण के मध्य में स्थापन-पूर्वक, पुरुष अपने दक्षिण बाहु में एवं स्त्री अपने वाम बाहु में धारण करें, तो वे सर्वसिद्धि-समन्वित बन कर, धनवान् एवं पुत्रवान् बन सकते हैं ।।51।।

हे सुन्दरि ! इस कवच को न जानकर जो व्यक्ति धनदा देवी की आराधना करता है, वह व्यक्ति शस्त्रा-घात को प्राप्त होकर शीघ्र ही मृत्यु के मुख में पतित होता है ।।52।।

कवचेनावृतो नित्यं यत्र यत्रैव गच्छति।
अतएव महादेवि स पूज्यो नात्र संशयः।
समाप्तं कवचं देवि किमन्यत् श्रोतुमिच्छसि ॥53॥

श्री देव्युवाच –

अहो पूज्य महादेव संसारार्णवतारक।
सर्वयोगमयस्त्वं हि शरणागतवत्सलः ॥54॥
केनोपायेन देवेश शीघ्रं सिद्धा भवन्ति हि।
तत् सर्वं श्रोतुमिच्छामि कथ्यतां परमेश्वर ॥55॥

शिव उवाच –

प्रेतभूमौ तु सप्ताहं प्रत्यहं परमेश्वरि।
दिक्सहस्रं जपेद्विद्यां तदा सिद्धिर्न संशयः ॥56॥
अथवा परमेशानि शवमानीय यत्नतः।
वितस्तिमात्रखाते तु पातनं हट्टमन्दिरे ॥57॥

हे देवि ! इस कवच के द्वारा समावृत होकर साधक जहाँ कहीं भी गमन करें, उसी स्थान में सभी के पूज्य बनकर वास कर सकता है। इसमें कोई संशय नहीं है। हे देवि ! यहाँ पर धनदा देवी का कवच समाप्त होता है। आपको और क्या सुनने की इच्छा हो रही है, बतायें ॥53॥

देवी ने कहा – हे महादेव ! आप जगत् के पूज्य हैं। आप ही संसार-सागर में परित्राण (रूप कार्य) के कारण हैं। आप ही सर्वयोगमय हैं एवं जो आपके शरणागत बनते हैं, आप उसके प्रति विशेष स्नेह रखते हैं ॥54॥

हे देवेश्वर ! किस उपाय का अवलम्बन करने पर, साधक शीघ्र सिद्धिलाभ कर सकता है, मैं उसे सुनने की इच्छा कर रही हूँ। उन सभी का विस्तार के साथ वर्णन करें ॥55॥

शिव ने कहा – हे परमेश्वरि ! श्मशान भूमि में समासीन होकर एक सप्ताह पर्यन्त प्रतिदिन दस सहस्र इष्ट-देवता के मूलमन्त्र का जप करें। वैसा करने पर, शीघ्र सिद्धि-लाभ होगा। इसमें किसी प्रकार का संशय नहीं है ॥56॥

हे परमेश्वरि ! अथवा, यत्नपूर्वक एक शव का आनयन कर द्वादशाङ्गुल परिमाण में खात (गर्त, गड्ढा) बनाकर, उसके मध्य में उस शव को संस्थापन-पूर्वक उसके ऊपर उपवेशन करें ॥57॥

अमावस्यां समारभ्य यावत् शुक्लाष्टमी भवेत् ।
प्रत्यहं प्रजपेद्विद्यां गजान्तकसहस्रकम् ।
तदा सिद्धो भवेद्देवि नान्यथा मम भाषितम् ॥58॥
यदेतत् कथितं सर्वं तत्त्वज्ञाने सुरेश्वरि ।
तत्त्वज्ञानं विना देवि न हि सिद्धिः प्रजायते ॥59॥
अथवा परयत्नेन केवलं शक्तियोगतः ।
पूर्वचतुष्टयं देवि समानीय प्रयत्नतः ॥60॥
तस्यै दत्त्वा स्वयं पीत्वा प्रजपेद् यदि साधकः ।
तदा सिद्धिं लभेद्देवि सत्यं सत्यं न संशयः ॥61॥
यत्र यत्र विनिर्दिष्टं जपकार्ये सुरेश्वरि ।
तत्र तत्र महेशानि गजान्तक सहस्रकम् ॥62॥

इति गुप्त साधनतन्त्रे पार्वती शिव संवादे
नवमः पटलः ॥9॥

इसके अनन्तर अमावस्या से शुक्लाष्टमी पर्यन्त प्रतिदिन अष्टोत्तर सहस्र इष्ट-मन्त्र का जप करें । हे देवि ! उक्त-रूप से आराधना करने पर, वह साधक निश्चय ही सिद्ध हो जाते हैं । हे प्रिये ! मेरे इस वाक्य की अन्यथा कभी नहीं होती है ।।58।।

हे सुरेश्वरि ! मैंने इस प्रकार सिद्धि-प्राप्ति की प्रक्रिया को बताया है । तत्त्वज्ञान प्राप्त होने पर ही यह सिद्धि-पद बनता है । तत्त्वज्ञान के बिना कदापि साधक को सिद्धि-प्राप्ति नहीं हो सकती है ।।59।।

अथवा, पूवोक्त शक्ति-चतुष्टय का आनयन कर, परम यत्न के साथ केवल उसी शक्ति के योग से देवी की आराधना करें ।।60।।

इसक अनन्तर साधक उस शक्ति को पान कराकर, उसके अवशिष्ट को स्वयं पान करें एवं उस शक्ति के सहयोग से जप करता रहे । इस प्रकार, आराधना करने पर, साधक सिद्धि-लाभ कर सकता है । हे देवि ! मेरे इस वाक्य को सत्य, सत्य जानें । इसमें किसी प्रकार का संशय न करें ।।61।।

हे सुरेश्वरि ! जिस-जिस स्थान में जप-कार्य का निर्देश दिया गया है, उस-उस स्थान में अष्टोत्तर सहस्र जप करना चाहिए ।।62।।

गुप्तसाधनतन्त्र में नवम पटल समाप्त ॥9॥

दशमः पटलः

श्रीदेव्युवाच —

मातङ्गी परमेशानी त्रैलोक्येषु च दुर्लभा।
मन्त्ररूपेण देवेश कथयस्व मयि प्रभो।

श्री शिव उवाच —

शृणु चार्वङ्गि सुभगे मातङ्गी मन्त्रमुत्तमम्।
प्रणवञ्च समुद्धृत्य महामायां समुद्धरेत् ॥1॥
कामबीजं समुद्धृत्य कूर्चबीजं समुद्धरेत्।
मातङ्गीं ङेयुतां पश्चादस्त्रमन्त्रं समुद्धरेत् ॥2॥
वह्निजायान्वितो मन्त्रः सर्वतन्त्रेषु पूजितः।
सार्द्धदशाक्षरी विद्या ब्रह्मादिपरिपूजिता ॥3॥
अस्या विज्ञानमात्रेण पुनर्जन्म न विद्यते।
कामतुल्यश्च नारीणां रिपूणां शमनोपमः।
कुबेर इव वित्ताढ्यो धरणी सदृशः क्षमः ॥4॥

पुनः पार्वती ने जिज्ञासा की — हे देवेश्वर ! त्रिलोक के मध्य में परमेश्वरी मातङ्गी देवी अतिदुर्लभा हैं। हे प्रभो ! उन मातङ्गीदेवी के मन्त्रादि को मेरे निकट प्रकट करते हुए उनका कीर्त्तन करें ।।1।।

शिव ने कहा — हे सुन्दरि ! मैं आपके निकट मातङ्गी देवी के मन्त्र को बता रहा हूँ। हे सुभगे ! अवहित चित्त से श्रवण करें। '3ॐ ह्रीं कलीं हुं मातङ्ग्यै फट् स्वाहा' – यह मातङ्गी-मन्त्र सर्व तन्त्रों में पूजित है। ब्रह्मादिदेवगण भी इस सार्द्ध दशाक्षरी विद्या की अर्चना करते हैं ।।2-3।।

जो इस विद्या को सम्यक् रूप से जानते हैं, उनका पुनर्जन्म नहीं होता है। वह व्यक्ति नारियों के निकट कामदेव के समान हैं, शत्रु के समक्ष शमन के सदृश हैं, कुबेर के समान धनवान् हैं एवं धरणी के तुल्य क्षमाशील होते हैं ।।4।।

विराट्छन्दो महेशानि मातङ्गी देवता स्मृता।
धर्मार्थकाम-मोक्षेषु विनियोगः प्रकीर्त्तितः ॥5॥
ध्यानपूजादिकं सर्वं यामले च पुरोदितम्।
तस्याः स्तोत्रं महापुण्यं सावधानवधारय ॥6॥
उद्यदादित्य सङ्काशां नयनत्रयशोभिताम्।
भक्तानां वरदां देवीं मातङ्गीं तां नमाम्यहम् ॥7॥
श्यामवर्णां महादेवी सर्वालङ्कारभूषिताम्।
द्रुतसिद्धिप्रदां दिव्यां मातङ्गीं तां नमाम्यहम् ॥8॥
मुक्ताहारलतावल्यां नानामणिविराजिताम्।
कोटिविद्युत्प्रतीकाशां मातङ्गीं तां नमाम्यहम् ॥9॥
वरदां वरदानाढ्यां वरमालाञ्च धारिणीम्।
दैत्यदानवसंहर्त्रीं मातङ्गीं तां नमाम्यहम् ॥10॥

हे महेशानि ! इस मन्त्र का छन्द है विराट् एवं देवता हैं मातङ्गी, धर्मार्थ-काम-मोक्ष में इसका विनियोग होता है अर्थात् इस मन्त्र की आराधना से धर्म, अर्थ, काम एवं मोक्ष – इन चतुर्वर्ग का लाभ हो सकता है ।5।।

हे देवि ! इन विद्या के ध्यान एवं पूजादि सभी को मैंने यामल में प्रकाशित किया है । इस समय इनके महापुण्यप्रद स्तोत्र को बता रहा हूँ, अवहित चित्त से श्रवण करें ।।6।।

जिनकी देहकान्ति उदयगामी आदित्य के समान समधिक समुज्वल है, जो भक्तों को वर प्रदान करतीं हैं, उन त्रिनयन परिशोभिता मातङ्गी देवी को नमस्कार करता हूँ ।।7।।

जो श्यामवर्णा एवं सर्वालङ्कारविभूषिता हैं, जो भक्तगणों को शीघ्र सिद्धि प्रदान करती हैं, उन दिव्यरूपिणी महादेवी मातङ्गी को नमस्कार करता हूँ ।।8।।

जो मुक्ताहार से परिशोभिता हैं, जो नाना प्रकार के मणिगणों में (मणियों में) विराजिता हैं, जो कोटि विद्युत् (के प्रकाश) के समान प्रकाशित हैं, उन मातङ्गी देवी को मैं नमस्कार करता हूँ ।।9।।

जो साधक को वर प्रदान करतीं हैं, जो वरमुद्रा एवं माला को धारण की हुई हैं, जो दैत्य एवं दानवों का संहार करती हैं, उन मातङ्गी देवी को मैं नमस्कार करता हूँ ।।10।।

किङ्किणीनरहस्ताढ्यां कटिदेशसुशोभनाम् ।
पट्टवस्त्रपरीधानां मातङ्गीं तां नमाम्यहम् ॥11॥
सौदामिनीसमाभासां नानालङ्कारसंयुताम् ।
इन्द्रादिदेवतासेव्यां मातङ्गीं तां नमाम्यहम् ॥12॥
शुद्धकाञ्चनसंयुक्तां चरणाङ्गुलिराजिताम् ।
मणिक्यरत्नसंयुक्तां मातङ्गीं तां नमाम्यहम् ॥13॥
दिङ्मुखे दशचन्द्राढ्यां सुधावर्षणकारिणीम् ।
देववृन्दसमायुक्तां मातङ्गीं तां नमाम्यहम् ॥14॥
इदं स्तोत्रं मया प्रोक्तं साधिकाभीष्ट दायकम् ।
त्रिसन्ध्यं यः पठेन्नित्यं तस्य सिद्धिरदूरतः ॥15॥
पूजाकाले सकृद्वापि यः पठेत् स्तोत्रमुत्तमम् ।
तं साधकं विलोक्यैव कुबेरोऽपि तिरस्कृतः ॥16॥

जो नरों के हस्तों को अपने कटिदेश में किङ्किणी-रूप से धारण कर सुशोभित हो रही हैं, जो पट्टवस्त्र-परिधारिणी हैं, उन मातङ्गी देवी को मैं नमस्कार करता हूँ ।।11।।

जो सौदामिनी के समान प्रभाशालिनी हैं, जो नाना-प्रकार के अलङ्कारों से विभूषिता हैं, इन्द्रादि देवगण नियत जिनकी सेवा करते रहते हैं, उन मातङ्गी देवी को मैं नमस्कार करता हूँ ।।12।।

शुद्ध काञ्चन (स्वर्ण) के संयोग से जिनकी चरणाङ्गुलि सुशोभिता हैं, जो माणिक्य प्रभृति रत्नों के संयोग से विभूषिता हैं, उन मातङ्गी देवी को मैं नमस्कार करता हूँ ।।13।।

दस दिशाएँ जिनके दस वदन-स्वरूप हैं, जो दस चन्द्राढ्या हैं, जो जगत् में सुधा-वर्षण करती रहती हैं, जो देववृन्दों से परिवृता हैं, उन मातङ्गी देवी को मैं नमस्कार करता हूँ ।।14।।

हे देवि ! मैंने इस प्रकार मातङ्गी स्तोत्र को कहा है । यह स्तोत्र साधक को अभीष्ट वर प्रदान करता है । जो साधक इस स्तोत्र का प्रतिदिन त्रिसन्ध्या में पाठ करते हैं, शीघ्र ही उनकी सिद्धि हो जाती है ।।15।।

जो व्यक्ति पूजा के समय एकबार-मात्र इस स्तोत्र का पाठ करता है, उस साधक का दर्शन करने पर कुबेर भी तिरस्कृत हो जाते हैं अर्थात् वह व्यक्ति कुबेर से भी अधिक धनशाली बन सकता है ।।16।।

यस्मै कस्मै न दातव्यं न प्रकाश्यं कदाचन ।
प्रकाशात् सिद्धिहानिः स्यात् तस्मात् यत्नेम गोपयेत् ॥17॥

स्तोत्रं समाप्तं देवेशि किमन्यच्छ्रोतुमिच्छसि ।
कथयस्व महाभोगे यत्ते मनसि वर्त्तते ॥18॥

श्रीदेव्युवाच —

देवदेव जगन्नाथ जगन्निस्तार कारक ।
मातङ्गी कवचं नाथं श्रोतुमिच्छामि साम्प्रतम् ॥19॥

यां समाराध्य देवेश धनेशोऽभूद्धनाधिपः ।
यामाराध्य महादेव वासवस्त्रिदशेश्वरः ॥20॥

ब्रह्मविष्णुमहारुद्राः समाराध्य सुरेश्वरीम् ।
सृष्टिस्थितिलयं देवि कर्त्तारो जगदीश्वराः ।
तस्यास्तु कवचं दिव्यं कथयस्वानुकम्पया ॥21॥

हे देवि ! यह स्तोत्र साधारण जन को प्रदान न करें एवं सर्वत्र प्रकाशित न करें । चूँकि इस स्तोत्र का प्रकाशन करने पर सिद्धिहानि होती है, अतः यत्नपूर्वक इसे गोपन करके रखें ।।17।।

हे देवेशि ! यहाँ तक मातङ्गी देवी का स्तोत्र समाप्त होता है । हे प्राणवल्लभे ! इसके अनन्तर आपको जो कुछ सुनने की इच्छा हो रही है, उस मनोगत भाव को प्रकाशित करके कहें ।।18।।

देवी ने कहा — हे देवदेव ! आप जगत् के अधीश्वर हैं एवं आप ही जगत् का निस्तारण करते हैं । हे नाथ ! सम्प्रति मातङ्गी देवी के कवच को श्रवण करने की अभिलाषा हो रही है ।।19।।

हे देवेश्वर ! जिनकी आराधना करके कुबेर धनपति बन गये हैं एवं जिनकी आराधना करने से इन्द्र त्रिदशेश्वर बन गये हैं, ब्रह्मा, विष्णु एवं महारुद्र – ये भी जिनकी आराधना करके, सृष्टि, स्थिति, प्रलय करते हुए जगत् के अधीश्वर बन गये हैं, उन महादेवी मातङ्गी के कवच का कीर्त्तन, मेरे प्रति अनुकम्पा-प्रदर्शन-पूर्वक करें ।।20-21।।

श्रीशिव उवाच —

शृणु देवि प्रवक्ष्यामि मातङ्गी कवचं शुभम्।
तव स्नेहान्महादेवि कवचं ब्रह्मरूपकम् ॥22॥
त्रैलोक्यरक्षणस्यास्य दक्षिणामूर्त्तिसंज्ञकः।
ऋषिश्छन्दो विराड् देवि मातङ्गी देवता स्मृता।
धर्मार्थ काममोक्षेषु विनियोगः प्रकीर्त्तितः ॥23॥
ॐ बीजं मे शिरः पातु ह्रीं बीजं मे ललाटकम्।
क्लीं बीजं चक्षुषो पातु नासायां परिरक्षतु ॥24॥
माकारं वदनं पातु तकारं कण्ठकेऽवतु।
ङ्गयैकारं स्कन्धदेशञ्च फकारं बाहुयुग्मकम् ॥25॥
टकारं हृदयं पातु स्वकारं स्तनयुग्मकम्।
पृष्ठदेशं तथा नाभिं जठरं लिङ्गदेशकम् ॥26॥
पादद्वन्द्वञ्च सर्वाङ्गं हाकारं परिरक्षतु।
सार्द्धदशाक्षरी विद्या सर्वाङ्गं परिरक्षतु ॥27॥

शिव ने कहा — हे देवि ! मैं मातङ्गी देवी के कवच को बता रहा हूँ, श्रवण करें। यह कवच साधारण (जनों) के लिए शुभप्रद है। हे देवि ! मैं आपके प्रति स्नेह रहने के कारण परमब्रह्म-स्वरूप इस कवच को कह रहा हूँ ॥22॥

यह कवच त्रैलोक्य की रक्षा करते हैं। इस त्रैलोक्य-रक्षण कवच के ऋषि हैं दक्षिणामूर्त्तिसंज्ञक भैरव, छन्द है विराट्, मातङ्गी देवी हैं देवता एवं धर्मार्थकाम मोक्ष के साधन में इसका विनियोग होता है अर्थात् इस कवच का पाठ करने पर धर्म, अर्थ, काम एवं मोक्ष इन चतुर्वर्ग का लाभ होता है ॥23॥

'ॐ' यह बीज मेरे सिर की रक्षा करें। इसी प्रकार 'ह्रीं' यह बीज मेरे ललाट की, 'क्लीं' यह बीज मेरे चक्षुद्वय एवं नासिका की, 'मा' यह वर्ण मेरे वदन की, 'त' यह वर्ण मेरे कण्ठदेश की, 'ङ्गयै' यह वर्ण मेरे स्कन्धदेश की, 'फ' यह वर्ण मेरे बाहुयुगल की, 'ट्' यह वर्ण मेरे हृदय की, 'स्वा' यह वर्ण मेरे स्तनद्वय की एवं 'हा' यह वर्ण मेरे पृष्ठदेश, नाभि, उदर, लिङ्गदेश, पादद्वन्द्व प्रभृति सर्वाङ्ग की रक्षा करें। यह सार्द्ध दशाक्षरी विद्या मेरे सर्व शरीर की रक्षा करें ॥24-27॥

इन्द्रो मां पातु पूर्वे च वह्निकोणेऽनलोऽवतु ।
यमो मां दक्षिणे पातु नैर्ऋत्यां निर्ऋतिश्च माम् ॥28॥
पश्चिमे वरुणः पातु वायव्यां पवनोऽवतु ॥29॥
कुबेरो दिशि कौबेर्य्यामीश ईशानकोणके ।
ऊर्ध्वं ब्रह्मा सदा पातु अधश्चानन्त एव च ॥30॥
रक्षाहीनन्तु यत् स्थानं वर्जितं कवचेन तु ।
तत् सर्वं रक्ष मे देवि मातङ्गी सर्वसिद्धिदे ॥31॥
इति ते कथितं देवि कवचं परमाद्भुतम् ।
त्रिसन्ध्यं यः पठेन्नित्यं स साक्षाच्छङ्करः स्वयम् ॥32॥
पुष्पाञ्जलाष्टकं दत्त्वा मूलेनैव पठेत् सकृत् ।
शतवर्षसहस्राणां पूजायाः फलमाप्नुयात् ॥33॥
भूर्जे विलिख्य गुलिकां स्वर्णस्थां धारयेद् यदि ।
सर्वसिद्धियुतः सोऽपि सर्वसिद्धितपोयुतः ॥34॥

इन्द्रदेव मेरे पूर्वदिशा में, अग्निदेव मेरे अग्निकोण में, यम दक्षिणदिशा में, निर्ऋति नैर्ऋतकोण में, वरुणदेव पश्चिमदिशा में, पवनदेव वायुकोण में, कुबेर उत्तरदिशा में, ईशान ईशानकोण में, ब्रह्मा ऊर्ध्वदिशा में एवं अनन्तदेव अधोदेश में मेरी रक्षा करें ।।28-30।।

जो-जो स्थान रक्षाहीन एवं कवच-वर्जित हैं, उस-उस स्थान की, सर्वसिद्धिप्रदा मातङ्गी देवी, रक्षा करें ।।31।।

हे देवि ! आपके निकट इस परमाद्भुत कवच का कीर्त्तन किया हूँ । जो इस कवच का पाठ प्रतिदिन प्रातःकाल, मध्याह्न के समय एवं सायंकाल के समय करते हैं, वह साक्षात् शङ्करस्वरूप बन सकते हैं ।।32।।

मूलमन्त्र से देवी को अष्ट पुष्पाञ्जलि प्रदान कर, एकबार-मात्र इस कवच का पाठ करने पर, सहस्र वर्षों की पूजा के (फल के समान) फल-लाभ होता है ।।33।।

इस कवच को भूर्जपत्र पर लिखकर यदि कोई इसे स्वर्ण के मध्य में (रखकर) धारण करता है, तो वह साधक सर्वप्रकार सिद्धियों के अनुकूल तपस्या से समन्वित होकर, सर्वसिद्धियों से युक्त बन जाते हैं ।।34।।

ब्रह्मास्त्रादीनि शस्त्राणि तद्गात्रं प्राप्य पार्वति ।
माल्यानि कुसुमान्येव भवन्त्यैव न संशयः ॥35॥
न देयं परशिष्येभ्यो नाभक्तेभ्यो विशेषतः ।
देयं शिष्याय शान्ताय चान्यथा पतनं भवेत् ॥36॥
प्रातःकाले पठेद् यस्तु गुरुपूजापुरःसरम् ।
तस्य सर्वार्थसिद्धिः स्यात् स शिवो नात्र संशयः ॥37॥
मध्याह्ने प्रपठेद् यस्तु गुरुचिन्तापुरःसरम् ।
कुबेर इव वित्ताढ्यो जायते मदनोपमः ॥38॥
सायंकाले पठेद् यस्तु ध्यात्वा देवीं हृदयम्बुजे ।
सर्वसिद्धियुतो भूत्वा विचरेत् भैरवो यथा ॥39॥
गुरुपूजायुतो भूत्वा कवचः प्रपठेद् यदि ।
लक्ष्मीः सरस्वती तस्य निवसेन्मन्दिरे सुखे ॥40॥

हे पार्वति ! जो व्यक्ति इस सर्वरक्षाकारक कवच का पाठ करते हैं, उनके शरीर में कोई ब्रह्मास्त्र का निक्षेप करने पर भी वह अस्त्र कुसुममयी माला बनकर उसके शरीर में सुशोभित हो जाता है । इसमें कोई संशय नहीं है ।।35।।

हे देवि ! यह कवच कदापि भक्तिहीन व्यक्ति को एवं पर-शिष्य को प्रदान न करें । जो शान्त हैं एवं अपने शिष्य हैं, उसे ही इस कवच को प्रदान करें । अन्यथा (उनका) पतन हो जाता है ।।36।।

हे देवि ! जो साधक प्रातःकाल गुरुपूजा-पूर्वक इस कवच का पाठ करते हैं, उनकी सर्वार्थ-सिद्ध होती है एवं वह व्यक्ति साक्षात् शिवस्वरूप वन सकते हैं । इसमें कोई संशय नहीं है ।।37।।

हे देवि ! जो साधक मध्याह्नकाल में अपने सहस्र दल-कमल पर गुरुदेव को अवस्थित-रूप में चिन्तन करते हुए इस कवच का पाठ करते हैं, वे कुबेर के समान धनवान् एवं कामदेव के समान रूपवान् बन सकते हैं ।।38।।

जो व्यक्ति सायंकाल हृदय-कमल पर, इष्टदेवता का ध्यान कर, इस कवच का पाठ करते हैं, वे सर्वप्रकार की सिद्धियों से युक्त होकर, भैरव के समान सर्वत्र विचरण कर सकते हैं ।।39।।

यदि कोई साधक गुरुपूजा-परायण होकर इस कवच का पाठ करते हैं, तो उनके गृह में लक्ष्मी एवं सरस्वती – सुख-पूर्वक वास करती रहती हैं ।।40।।

इदं कवचमज्ञात्वा मातङ्गीं यदि वा जपेत् ।
इहलोके दरिद्रः स्यात् मृते शूकरतां व्रजेत् ।।41।।
समाप्तं कवचं देवि शृणु मत्प्राणवल्लभे ।
षट्सहस्त्रं जपेन्मन्त्रं दशांशं होमयेत् सुधीः ।।42।।
ब्रह्मवृक्षैर्भवेत् काष्ठैर्होमात् सर्वसमृद्धिदः ।
तर्पणञ्चाभिषेकञ्च दशांशमाचरेत् सुधीः ।।43।।
तद्दशांशं महेशानि कुर्यात् ब्राह्मणभोजनम् ।
ततः सिद्धो भवेन्मन्त्री नान्यथा मम भाषितम् ।।44।।
सकृत् कृते परेशानि यदि सिद्धिर्न जायेत ।
पुनस्तेनैव कर्त्तव्यः ततः सिद्धो भवेद् ध्रुवम् ।।45।।

इति गुप्तसाधन तन्त्रे पार्वती-शिव संवादे
दशमः पटलः ।।10।।

हे देवि ! इस कवच को न जानकर यदि कोई मातङ्गी देवी की अर्चना अथवा मन्त्र का जप करते हैं, तो वे इस लोक में दरिद्र बनकर, मृत्यु के बाद परलोक में गमन कर, शूकर-योनि को प्राप्त होते हैं ।।41।।

हे देवि ! यहाँ पर मातङ्गी का कवच समाप्त होता है । हे प्राणवल्लभे ! इसके बाद जो कुछ बता रहा हूँ श्रवण करें । षट् सहस्त्र (6000) मातङ्गी-मन्त्र का जप कर, सुधी साधक जप का दशांश अर्थात षट् शत (600) होम करें ।।42।।

हे देवि ! पलाश-समिध के द्वारा इस होम को करना चाहिए । इस प्रकार जप एवं होम करने पर साधक सर्व-समृद्धि-सम्पन्न बन सकता है । इसके अनन्तर होम का दशांश तर्पण तथा तर्पण का दशांश अभिषेक करना चाहिए । हे देवि ! साधक उक्त समस्त कार्यों को करके अभिषेक के दशांश-संख्यक ब्राह्मणों को भोजन करावें । जो व्यक्ति इस प्रकार मातङ्गी देवी की आराधना करते हैं, वह साधक सर्व प्रकार सिद्धियों का लाभ कर सकते हैं । मेरे इस वाक्य की अन्यथा कदापि नहीं हो सकती है ।।43-44।।

हे देवि ! यदि एकबार इस प्रकार साधन करने पर सिद्धि नहीं होती है, तो पुनः उक्त रूप से आराधना करने पर निश्चय ही सिद्धिलाभ होता है ।।45।।

गुप्तसाधनतन्त्र में दशम पटल समाप्त ।।10।।

एकादशः पटलः

श्रीदेव्युवाच —

विश्वकर्त्ता विश्वहर्त्ता विश्वसंसारपालकः ।
त्वं विना संशयच्छेत्ता न हि त्राता च कुत्रचित् ॥1॥
वैष्णवेषु च शैवेषु शाक्ते सौरगणेऽपि च ।
सर्वत्र विहितां मालां वद में परमेश्वर ॥2॥

ईश्वर उवाच —

अक्षमाला महेशानि पञ्चाशद्वर्णरूपिणी ।
अकारादिर्महेशानि क्षकारान्तो यतः प्रिये ॥3॥
अक्षमाला समाख्याता सर्वतन्त्र-प्रपूजिता ।
अस्या जपनमात्रेण महामोक्षमवाप्नुयात् ॥4॥

श्री देव्युवाच —

योगमालाजपादेव सर्वयोगेश्वर प्रभो ।
देहमध्यस्थितां मालां पञ्चाशद्वर्णरूपिणीम् ॥5॥

पुनः पार्वती ने कहा — हे देवदेव ! आप विश्व की सृष्टि करते हैं, विश्व का संहार करते हैं एवं आप ही इस विश्व का पालन करते हैं । हे नाथ ! आप के अतिरिक्त ऐसा कोई नहीं हैं, जो संशय का छेदन कर सकता है एवं आपसे भिन्न कोई त्राण-कर्त्ता भी और कोई नहीं है ।।1।।

विष्णु के विषय में, शिवमन्त्रादि के जप में, शक्तिदेवता की अराधना में, सूर्यमन्त्र के जप में, गणेशमन्त्र के साधन में, जो-जो माला विहित है, उसके विषय में मुझे उपदेश करें ।।2।।

ईश्वर ने कहा — हे महेशानि ! पञ्चाशद्वर्णरूपिणी माला ही 'अक्षमाला' के नाम से जानी जाती है । हे प्रिये ! चूँकि अ-कार से क्ष-पर्यन्त पञ्चाशद्वर्ण ही इस माला के अन्तर्गत है, अतः इसे 'अक्षमाला' शब्द से अभिहित किया जाता है । यह माला सर्वतन्त्रों में ही पूजित है । इस माला में जप करने मात्र से साधक को महामोक्ष का लाभ होता है ।।3-4।।

देवी ने कहा — हे प्रभो ! योगमाला का जप करने से ही तत्क्षण वह साधक सर्वयोगों का ईश्वर बन सकता है । इस समय मेरा जिज्ञास्य यह है कि

तां विहाय महादेव अस्थिमालां जपेत् कथम्।
दीक्षितस्य च यच्चास्थि तद्वर्ज्जं वा कथं विभो ॥6॥
यस्य छायादिसंस्पर्शादशुचिर्जायते पुमान्।
तस्यास्थि च समानीय सर्वाङ्गे भूषणं कथम् ॥7॥

श्रीशिव उवाच —

शक्तिञ्च मन्त्रपूतञ्च ब्राह्मणादीन् सुरेश्वरि।
वर्जयित्वा प्रयत्नेन शृणु मत्प्राणवल्लभे।
कुर्याच्छवं तथा मालां मुण्डं श्मशानमेव च ॥8॥
प्रणवं निष्कलं साक्षाद् ब्रह्मविष्णुशिवात्मकम्।
प्रणवं प्रजपेद् यस्तु स साक्षाद्विष्णुरूपधृक् ॥9॥
ॐकारात् सर्ववर्णानि जायन्ते नात्र संशयः।
ॐकारं त्रिगुणं देवि गुणातीतन्तु निष्कलम् ॥10॥

देह के मध्य में जो पञ्चाशद्वर्णरूपिणी माला है, हे महादेव ! उसका परित्याग कर, साधकगण किस कारण से अस्थि-माला में जप करते हैं ? और जप के कार्य के लिए अस्थि-माला बनाना हो, तो किस कारण से साधकगण दीक्षित व्यक्ति के अस्थि का वर्जन कर देते हैं ? और जिनके छाया का स्पर्श करने पर भी मनुष्य अशुचि बन जाता है, हे नाथ ! किस कारण से उक्त-रूप अशुचि व्यक्ति के अस्थि का आनयन कर, साधकगण (उससे) अङ्गों का भूषण बनाते हैं ? हे प्राणेश्वर ! मेरे इन समस्त संशयों का छेदन करें ।।5-7।।

शिव ने कहा — हे सुरेश्वरि ! हे प्राणाधिके ! यत्नपूर्वक श्रवण करें। स्त्री-शरीर, मन्त्रपूत अर्थात दीक्षादि संस्कार से पवित्र हुए व्यक्ति का शरीर एवं ब्राह्मणादि के शरीरों का परित्याग कर, शव, माला, मुण्ड एवं श्मशान का ग्रहण करना चाहिए। कदापि कोई स्त्री प्रभृति के शरीर के द्वारा शव-साधन न करें, उनकी अस्थियों के द्वारा माला न बनावें एवं उनके मुण्डों का ग्रहण कर, देवता-साधन में प्रवृत्त न होवें अथवा स्त्री, दीक्षित व्यक्ति एवं ब्राह्मणादि के मन्त्र की सिद्धि, श्मशान में करने न जावें ।।8।।

हे देवि ! एकमात्र प्रणव अर्थात् 'ॐ' – यह वर्ण साक्षात् ब्रह्मविष्णुशिवात्मक है। जो उस प्रणव-मन्त्र का जप करते हैं, उन्हें 'विष्णु' के नाम से जानें ।।9।।

हे देवि ! ॐकार से ही सर्व वर्णों की उत्पत्ति होती है, इसमें संशय नहीं है। यह ॐकार सत्त्व, रज एवं तम – इन तीन गुणों से विशिष्ट एवं गुणातीत निष्कल ब्रह्मस्वरूप है ।।10।।

गुरुवक्त्रान्महामन्त्रं प्राप्नोति चैव मानवः ।
सर्वे वर्णा महेशानि लीयन्ते प्रणवे प्रिये ॥11॥

अतएव महेशानि प्रणवो ब्रह्मरूपकः ।
स्त्रीशूद्रयोः परेशानि प्रणवे नाधिकारिता ॥12॥

तज्जातश्चैव चाण्डालः सर्वमन्त्रविवर्जितः ।
मन्त्रहीने तु अस्थ्यादि सर्ववर्णविभूषितः ॥13॥

अकारादि- क्षकारान्ता अस्थिमध्ये स्थिताः सदा ।
तिलार्द्धे चास्थिमध्ये च पञ्चाशद्वर्णरूपिणी ॥14॥

अतएव बहिःकण्ठे ग्रीवायाञ्च तथा करे ।
सर्वत्राहं परेशानि महाशङ्ख विभूषितः ॥15॥

महाशङ्खाख्यमालायां यो जपेत् साधकोत्तमः ।
अणिमादिविभूतीनामीश्वरो नात्र संशयः ॥16॥

साधक गुरुदेव के मुख से महामन्त्र प्रणव को प्राप्त होता है । हे प्रिये ! एक प्रणव में ही समस्त वर्ण विलीन रूप में है । हे महेशानि ! अतः प्रणव ही साक्षात् ब्रह्म-रूपी है । और स्त्री तथा शूद्र – इन लोगों का प्रणव में अधिकार नहीं है । तथापि स्त्री शक्तिरूपा है । हे देवि ! इस समय विचार करके देखें कि ब्राह्मण एवं दीक्षित व्यक्ति प्रणव-मन्त्र का जप करते हैं । अतः उनका शरीर शव-साधनादि कार्यों के लिए उपयोगी नहीं है ।।11-12।।

स्त्री एवं शूद्र – दोनों से ही चण्डाल की उत्पत्ति होती है । अतः वे सर्वमन्त्रविवर्जित हैं और जो मन्त्रविहीन हैं, उनलोगों की अस्थि ही सर्ववर्णों से विभूषित हैं ।।13।।

हे देवि ! अकारादि क्ष पर्यन्त समस्त वर्ण अस्थियों में विद्यमान हैं एवं एक तिलार्द्ध-परिमित अस्थि में भी पञ्चाशद्वर्ण-रूपिणी माला है । हे महेशानि ! इसी कारण मैं कण्ठ में, गलदेश में एवं हस्त प्रभृति सर्व शरीर में महाशङ्ख के द्वारा विभूषित बना हूँ ।।14-15।।

हे देवि ! जो साधकोत्तम महाशङ्ख-माला में जप करते हैं, उसे अणिमादि अष्ट ऐश्वर्य की सिद्धि प्राप्त होती है । इसमें कोई संशय नहीं है ।।16।।

सर्ववर्णमयी माला सर्वदेवेषु योजिता ।
वर्णहीनं नास्ति मन्त्रं कदाचिदपि पार्वति ॥17॥
महाशङ्खं महेशानि सर्ववर्णविभूषितम् ।
अतएव महाशङ्खं सर्वतन्त्रेषु योजितम् ॥18॥
यदि भाग्यवशाद्देवि महाशङ्खञ्च लभ्यते ।
स सिद्धः सगणः सोऽपि स च विष्णुर्न संशयः ॥19॥
तदैव सहसा सिद्धिर्नात्र कार्या विचारणा ।
गोपुच्छसदृशीं कुर्यादथवा सर्परूपिणीम् ॥20॥
स्थूला सूक्ष्मा च पर्यन्तं क्रमेश ग्रथनञ्चरेत् ।
मूलेन ग्रथनं कार्यं प्रणवेनाथवा प्रिये ॥21॥
ब्रह्मग्रन्थिं प्रयत्नेन दद्यात् साधकसत्तमः ।
सूत्रद्वयं परेशानि मिलितं कारयेत्ततः ॥22॥

यह महाशङ्ख-माला सर्ववर्णमयी है एवं यह माला सर्व देवता में योजित हो सकती है । हे पार्वति ! चूँकि कदापि वर्णहीन मन्त्र से हो ही नहीं सकता, किन्तु महाशङ्ख-माला सर्व वर्णों से विभूषित है । अतः महाशङ्ख ही सर्व प्रकार मन्त्र के जप में प्रशस्त होता है ।।17-18।।

हे देवि ! यदि भाग्यवश कोई महाशङ्ख को प्राप्त कर सकता है, तभी वह व्यक्ति स्वकीयगणों के साथ सिद्धि-लाभ करते हैं एवं वही स्वयं विष्णुतुल्य बन जाते हैं, इसमें सन्देह नहीं है ।।19।।

उक्त प्रकार से देवी की आराधना करने पर ही शीघ्र सिद्धि प्राप्त होती है – इस विषय में कोई विचार्य तथ्य नहीं है । महाशङ्खमाला गो-पुच्छ सदृशी है अथवा इसे सर्पाकार करके प्रस्तुत करना चाहिए अर्थात् माला के मूलदेश को स्थूल बना कर, क्रमशः अपेक्षाकृत सूक्ष्म करते जायें ।।20।।

पहले स्थूल मालाओं का ग्रन्थन कर, क्रमशः अपेक्षाकृत सूक्ष्म मालाओं का ग्रन्थन करना चाहिए । हे प्रिये ! साधक स्वीय इष्ट मन्त्र से अथवा प्रणवमन्त्र से माला का ग्रन्थन करें ।।21।।

साधकश्रेष्ठ यत्नपूर्वक ब्रह्मग्रन्थि के द्वारा इस माला का ग्रन्थन करें । हे सुरेश्वरि ! जब माला का ग्रन्थन किया जाय, तब सूत्र के प्रान्त-द्वय को मिलित कर लेना चाहिए ।।22।।

मेरुञ्च ग्रहणं कार्यं तद्वर्ध्वे ग्रन्थिसंयुतम् ।
समीपे गुरुदेवस्य संस्कारमाचरेत् सुधीः ॥23॥
स्थूलावधि जपेन्मन्त्रं सूक्ष्मभागे समापयेत् ।
पुच्छावधि जपाद्देवि सिद्धिहानिः प्रजायते ॥24॥
शिवे ध्यात्वा जपेन्मालां गुरोर्ध्यानपुरःसरम् ।
तदैव लभते सिद्धिं साधकः शान्तमानसः ॥25॥
सम्भाव्य मालां भुजगेन तुल्यां कथाप्रसङ्गेन इव प्रजप्यात् ।
जपेन्मदङ्गं लभते तवाङ्गं प्रदीप्य कात्यायनि कामनादम् ॥26॥

इति गुप्तसाधनतन्त्रे पार्वती-शिव संवादे
एकादशः पटलः ॥11॥

वाद में मिलित किये गये उभय सूत्रों में मेरु को गूँथकर, उस मेरु के ऊर्ध्व में ब्रह्मग्रन्थि देना चाहिए । इसके अनन्तर सुधी साधक गुरुदेव के निकट से इस माला का संस्कार करा लेवें ।।23।।

माला के जिस ओर स्थूल (भाग) है, उस दिशा से जप प्रारम्भ कर, जो (भाग) दिशा सूक्ष्म है, उसी ओर समापन करें । इसप्रकार पुनः-पुनः स्थूल दिशा से जप करते रहें । हे देवि ! माला के सूक्ष्म ओर (दिशा) से जप आरम्भ करने पर, सिद्धिहानि होती है ।।24।।

हे शिवे ! गुरुदेव का ध्यान करके माला जप करें । वैसा करने पर ही साधक सिद्धिलाभ कर, प्रशान्त चित्त बन सकते हैं ।।25।।

इस माला भुजङ्गम के समान जान कर, कथा-प्रसङ्ग के समान अर्थात् अतिद्रुत या अति विलम्बित न हो, इस प्रकार जप करें । हे देवि ! कात्यायनि ! इस प्रकार साधक मेरे अङ्गस्वरूप मन्त्र का जप करने पर, (वह) कामनादि को दग्ध कर, आपके अङ्ग का लाभ कर सकता है ।।26।।

गुप्तसाधनतन्त्र में एकादश पटल समाप्त ॥11॥

द्वादशः पटलः

श्रीपार्वत्युवाच –

देवदेव महादेव संसारार्णवतारक ।
वेदमातेति विख्याता गायत्री च कथं भवेत् ।।1।।

श्रीशिव उवाच –

शृणु देवि प्रवक्ष्यामि गायत्रीं परमाक्षरीम् ।
वेदमातेति विख्याता सर्वतन्त्रप्रपूजिता ।।2।।
हालाहलं समद्धृत्य नाभ्यक्षरं समुद्धरेत् ।
वामकर्णयुतं कृत्वा पुनर्नाभिं समुद्धरेत् ।।3।।
कर्णयुक्तं मूर्द्धणि रेफं ततश्च सुरवन्दिते ।
वारुणं रसनायुक्तं चन्द्रबीजं ततः परम् ।।4।।
लान्तयुक्तं सर्गयुक्तं चैव व्याहृतिमुद्धरेत् ।
तत्पदञ्च समुद्धृत्य सवितुस्तदनन्तरम् ।।5।।

पार्वती ने जिज्ञासा की – हे देवदेव ! हे महादेव ! आप संसार-रूप सागर से भक्तगणों का परित्राण करते हैं । इस समय वेदमाता गायत्री को मेरे निकट प्रकाशित करें । गायत्री 'वेदमाता' इस नाम से किस प्रकार प्रसिद्ध हुई – इसे भी बतायें ।।1।।

शिव ने कहा – हे देवि ! मैं परमाक्षरी गायत्री को आपके निकट बता रहा हूँ, श्रवण करें । यह गायत्री 'वेदमाता' के नाम से विख्यात हैं एवं सर्व तन्त्रों में ही इनकी पूजा का कथन किया गया है ।।2।।

प्रथमतः, 'ॐ' इस वर्ण का उच्चारण कर, नाभ्यक्षर अर्थात् 'भ' इस वर्ण का उद्धार करें । फिर उस भ-कार में दीर्घ – ऊ-कार का योग कर, पुनः भ-कार में ह्रस्व-उ-कार एवं उसके ऊपर रेफ का योग करें । इसके अनन्तर 'व' इस वर्ण का उद्धार कर, उसके बाद विसर्ग, विसर्ग के बाद दन्त्य-स-कार का उद्धार करें । इस स-कार में व का योग कर, विसर्गयुक्त करें । हे सुपूजिते ! इस प्रकार, "भूर्भुवः स्वः" – इस व्याहृति-मन्त्र का उद्धार कर, उसके बाद "तत्" यह पद एवं उसके बाद "सवितुः" – इस पद का प्रयोग करें । इसके अनन्तर, 'वरेण्यं' इस पद का उच्चारण कर, "भर्गो देवस्य धीमहि" – इस वाक्य

वरेण्यमिति चोच्चार्य भर्गो देवस्य धीमहि।
धियो यो नः प्रचोदयात् प्रणवं तदनन्तरम् ॥6॥
इति जप्त्वा महेशानि साक्षान्नारायणो भवेत्।
धियो योर्मध्यभागे च यकारद्वयमेव च ॥7॥
अतएव महादेवि अनन्तश्रुतिरेव च।
इति जप्त्वा महेशानि मुक्तो भवति तत्क्षणात् ॥8॥
अन्त्ययकारयोः स्थाने योकार इति यः पठेत्।
स चाण्डाल इति ख्यातो ब्रह्महत्या दिने दिने ॥9॥
अतएव महेशानि तव स्नेहात् प्रकाशितम्।
दशभिर्जन्मजनितं शतेन च पुराकृतम् ॥10॥
त्रियुगन्तु सहस्रेण गायत्री हन्ति पातकम्।
लक्षं जप्त्वा तु तां देवीं गायत्रीं परमाक्षरीम्।
सर्वसिद्धीश्वरो भूत्वा देववत् विहरेत् क्षितौ ॥11॥

का योग करना है। इसके अनन्तर, "धियो यो नः प्रचोदयात्" – इस वाक्य का योग करें। बाद में "ॐ" इस वर्ण का योग करना है। हे देवि ! इस प्रकार क्रम से वर्ण-विन्यास करने पर ही गायत्री बन जायगी ।।3-6।।

हे महेशानि ! उक्तरूप गायत्री का जप करने पर, साधक साक्षात् नारायण बन सकता है। हे महादेवि ! 'धियो यो" इस पद में दो 'य'-कार है, वे अनन्त श्रुति-स्वरूप हैं। इसी कारण उक्त गायत्री का जप करने पर, साधक तत्क्षण मुक्त हो जाता है ।।7-8।।

उक्त 'य'-कार-द्वय को जो 'ज'-कार-रूप में उच्चारण करते हैं, वह 'चण्डाल' के नाम से प्रसिद्ध हो जाते हैं एवं दिन-प्रति-दिन ब्रह्महत्याजनित पाप होता ही जाता है ।।9।।

हे महेश्वरि ! इसी कारण मैं स्नेह के वशीभूत होकर आपके निकट गायत्री को प्रकाशित किया हूँ। इस गायत्री का दस बार जप करने पर, इस जन्म-कृत पाप का विनाश हो जाता है। इसका शत बार जप करने पर, पूर्व-जन्म-कृत पाप का विनाश हो जाता है एवं सहस्र बार जप करने पर, गायत्री युगत्रयोत्पन्न दुष्कृतियों को नष्ट कर देती हैं। एक लाख बार इस पराक्षरी गायत्री का जप करने पर, साधक सर्वप्रकार की सिद्धियों का अधीश्वर बनकर, पृथिवी पर देवताओं के समान विचरण कर सकते हैं ।।10-11।।

यद्गृहे विद्यते देवि एतत्तन्त्रं सुधामयम् ।
तद्गृहं परमेशानि कैलाससदृशं सदा ॥12॥
नित्यञ्च प्रजयेत् तन्त्रं स सिद्धो नात्र संशयः ।
नित्यं नित्यं महेशानि यः स्पृशेत्तन्त्रमुत्तमम् ॥13॥
स पूतः सर्वपापेभ्यश्चान्ते शिवमयो भवेत् ।
यो वै लिखेदिमं तन्त्रं शिववाक्यं सुधामृतम् ॥14॥
गङ्गास्नानसमं पुण्यमन्ते शिवमवाप्नुयात् ।
यो यत्र पठते नित्यं तन्त्रराजमिदं शुभम् ।
स सर्वदुष्कृतिं तीर्त्त्वा अन्ते देवीपदं व्रजेत् ॥15॥

इति गुप्तसाधनतन्त्रे पार्वती-शिव संवादे
द्वादशः पटलः ॥12॥

हे परमेश्वरि ! जिसके गृह में यह सुधामय तन्त्र विद्यमान रहता है, उसके गृह को कैलास के समान जानें ।।12।।

जो व्यक्ति नित्य इस तन्त्र की अर्चना करते हैं, वह निश्चय ही सिद्ध हो सकते हैं । हे महेशानि ! जो प्रतिदिन इस तन्त्रोत्तम का स्पर्श करते हैं, वे सर्व पापों से पवित्र होकर, अन्त में शिवमय बन जाते हैं । जो सुधामय शिववाक्य-स्वरूप तन्त्र को लिखकर ब्राह्मण को प्रदान करते हैं, वे गङ्गास्नान के समान पुण्य का लाभ कर, शिव-लोक में गमन करते हैं । जो व्यक्ति जिस स्थान पर रहकर, प्रतिदिन इस तन्त्र राज का पाठ करते हैं, वे सर्व दुष्कृतियों से उत्तीर्ण होकर देवी-पद को प्राप्त कर सकते हैं ।।13-15।।

गुप्तसाधनतन्त्र में द्वादश पटल समाप्त ॥12॥

हमारे प्रमुख प्रकाशन

1. मन्त्रमहोदधिः (मूल एवं हिन्दी अनुवाद) मूल्य 500/-
2. मन्त्रमहोदधि (मूल एवं अंग्रेजी अनुवाद) भाग - 1 मूल्य 1000/- भाग -2 मूल्य 1000/-
3. हिन्दी मन्त्रमहार्णव (मूल एवं हिन्दी अनुवाद) देवी 600/-, देवता 550/-, मिश्र मूल्य 250/-
4. श्रीविद्यार्णवतन्त्रम् (मूलमात्र) पूर्वार्द्धम् 400/- उत्तरा0 प्रथम 300/- उत्तरा0 द्वितीय मूल्य 300/-
5. कुलार्णव तन्त्र (मूल एवं अंग्रेजी अनुवाद) मूल्य 300/-
6. नारदपञ्चरात्रम् (मूल एवं हिन्दी अनुवाद) मूल्य 400/-
7. मंत्रयोग संहिता (मूल एवं हिन्दी अनुवाद) मूल्य 100/-
8. श्यामा रहस्यम् (मूल एवं हिन्दी अनुवाद) मूल्य 250/-
9. बृहत तन्त्रसार (मूल एवं हिन्दी अनुवाद) कृष्णानन्द आगमवागीश कृत भाग-1 500/-भाग-2 600/-
10. सप्तशतीसर्वस्वम् (नानाविधिसप्तशतीरहस्यसंग्रहः) मूल्य 150/-
11. श्रीनीलतंत्रम् (मूल एवं हिन्दी अनुवाद) मूल्य 150/-
12. भूतडामर महातन्त्रम् (मूलमात्र) मूल्य 100/-
13. शिवस्वरोदय (मूल एवं [illegible] सहित) मूल्य 75/-
14. शाक्तानंद तरङ्गिणी (मूल एवं [illegible]) मूल्य 200/-
15. वामकेश्वरीमतम् (मूल एवं [illegible] सहित) मूल्य 100/-
16. कौलज्ञाननिर्णय (मूल एवं [illegible] सहित) मूल्य 200/-
17. डामर तन्त्र (मूल एवं अंग्रेजी) मूल्य 100/-
18. डामर मन्त्र (मूल एवं हिन्दी) मूल्य 75/-
19. मन्त्र रामायण (मूल एवं हिन्दी) मूल्य 75/-
20. कामरत्नतन्त्रम् (मूल एवं हिन्दी अनुवाद) मूल्य 200/-
21. अद्भुत रामायण (महर्षि वाल्मीकि कृत) मूल्य 100/-
22. वङ्गसेन संहिता (मूल हिन्दी अनुवाद एवं परिशिष्ट सहित) मूल्य 750/-
23. हारीत संहिता (मूल एवं हिन्दी अनुवाद) मूल्य 300/-
24. भूतडामर तन्त्रम् (मूल एवं हिन्दी अनुवाद) मूल्य 75/-
25. योनितन्त्रम् (मूल एवं हिन्दी अनुवाद) मूल्य 75/-
26. कुब्जिका तन्त्रम् (मूल एवं हिन्दी अनुवाद) मूल्य 100/-
27. मुण्डमाला तन्त्रम् (मूल एवं हिन्दी अनुवाद) मूल्य 200/-
28. धनदारतिप्रिया तन्त्र (मूल एवं हिन्दी अनुवाद) मूल्य 10/-
29. कुमारी तन्त्रम् (मूल एवं हिन्दी अनुवाद) मूल्य 100/-
30. गुप्तसाधन तन्त्रम् (मूल एवं हिन्दी अनुवाद) मूल्य 100/-
31. माया तन्त्रम् (मूल एवं हिन्दी अनुवाद) मूल्य 100/-
32. कङ्काल मालिनी तन्त्रम् (मूल एवं हिन्दी अनुवाद) मूल्य 100/-
33. Enyclopedia of Yoga Rs. 750/-
34. Enyclopedia of Indian Erotices Rs. 250/-
35. Dictionaries of Tantrasastra Rs. 150/-
36. गणेशसहस्रनाम स्तोत्रम् मूल्य 50/-
37. सामुद्रिक शास्त्रम् (मूल एवं भावार्थबोधिनी टीका सहित) मूल्य 50/-
38. आगम तत्वविलास (मूल एवं हिन्दी अनुवाद) शीघ्र
39. सौभाग्यलक्ष्मी तन्त्रम् (मूल एवं हिन्दी अनुवाद) मूल्य 150/-
40. **सम्पूर्ण स्कन्द पुराण** (हिन्दी में प्रथम बार प्रकाशित होने जा रहा है।) (मूल एवं हिन्दी अनुवाद सहित) शीघ्र